डाक्टरों और शास्त्रों की राय में

ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद

मांस मछली अण्डा

लेखक

Dr. A.D. AVINASHI M.A., D.H.S.(DLI) D.P.E.(PB)
धर्मपाल शास्त्री एम० ए०, साहित्यभास्कर

सरल हिन्दी प्रकाशन, दिल्ली

डाक्टरों और शास्त्रों की राय में

मांस मछली अण्डा

बोलचाल की भाषा में रोचक प्रश्न और उत्तर

लेखक

डाक्टरों की राय—Dr. ए. डी. अविनाशी, M.A., D.H.S., D.P E.

शास्त्रों की राय—धर्मपाल शास्त्री, साहित्यभास्कर, M.A.

प्रकाशक

सरल हिन्दी प्रकाशन

ए-६७, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-११००१५

Doctoron Aur Shastron Ki Rai Main—

MAANS MACHHALI ANDA

(In the Opinion of Doctors & Scriptures
—MEAT FISH EGG—)

BY

Doctors' Opinion—Dr. A. D. Avinashi

Scriptures' Opinion—Dharmpaul Shastri

Published by

SARAL HINDI PRAKASHAN

A-67, Kirti Nagar, New Delhi-15

First Edition—1976-77

Price—Rs. 2.00

आचार्य धर्मपाल आर्य

यदि आप मांस खाते हैं तो भी !

यदि आप मांस नहीं खाते तो भी !

इस पुस्तक में पढ़िये—

क्या माँस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है ?

क्या डाक्टरों की राय में माँस स्वास्थ्य के लिये अच्छा है ?

क्या शास्त्रों की राय में मांस खाना उचित है ?

—— o ——

चार प्रश्न

क्या आपने कभी सोचा है—

?. हम जीते किसलिये हैं ?

हमारे जीवन के तीन उद्देश्य (Life Objectives) हैं — (i) हमारा तन स्वस्थ हो (ii) हमारा मन स्वस्थ हो (iii) तन मन का सारा जोर लगा कर हम उन्नति के शिखर पर पहुंचें, जिसका नाम पूर्णता (Perfection) है। इस प्रकार हमारे जीवन की पहली शर्त है—**शारीरिक स्वास्थ्य।**

??. शारीरिक स्वास्थ्य के मुख्य साधन क्या हैं ?

इसके मुख्य साधन पाँच हैं—(i) उचित भोजन द्वारा शक्ति पाना (ii) उचित व्यायाम (iii) उचित आराम (iv) उचित सफाई (v) रोगों से बचाव। इस प्रकार शारीरिक स्वास्थ्य की पहली शर्त है—**उचित भोजन।**

??? स्वास्थ्य के लिये शाकाहारी (Vegetarian) **भोजन अच्छा है या मांसाहारी** (Non-Vegetarian) **भोजन ?** शास्त्रों और डाक्टरों की राय में **शाकाहारी** भोजन ही हमारे स्वास्थ्य के लिये अच्छा है।

???? कुछ लोग कहते हैं कि मांस से बल और स्वास्थ्य बढ़ता है। इसके लिये वे कई प्रमाण (Proofs) **भी देते हैं ?**

असल में आदमी की यह आदत है कि वह अपने हर काम को 'अच्छा' बताता है। अच्छा काम तो अच्छा है ही। यदि वह गलत काम भी करे तो उसे भी अच्छा साबित करने की

कोशिश करता है। ठीक इसी प्रकार आदमी ने मांस खाने के लिये नीचे लिखे तीन बहाने बना लिये हैं और उनके द्वारा वह मांसाहार को उचित साबित करना चाहता है --

(i) मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है (ii) डाक्टरों की राय में मांस स्वास्थ्य के लिये लाभदायक है (iii) शास्त्रों की राय में मांस खाना उचित है।

'हाथ कंगन को आरसी क्या ?' आइये हम अपनी आंखों से देख-पड़-परख लें और अपनी बुद्धि से सोच-समझ लें कि —

(१) क्या मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है ?

(२) क्या डाक्टरों की राय में मांस स्वास्थ्य के लिये लाभदायक है ?

(३) क्या शास्त्रों की राय में मांस खाना उचित है ?

---

(१) वेद में मांसाहार की अनुमति नहीं

दुनिया के आरम्भ में ही वेदों का प्रकाश हुआ। वेद ने मनुष्य को आदेश दिया– *"यः पौरुषेयेण क्रविषा समङ्क्ते। यो अश्व्येन पशुना यातुधानः। यो अघ्न्याया: भरति क्षीरमग्ने। तेषां शीर्षाणि हरसाऽपि वृश्च। अथर्ववेद।८।३।१५*

अर्थात् जो मनुष्य घोड़े, दुधारु गाय आदि पशुओं का मांस खाता है वह राक्षस है। हे राजन्, तू उसका सिर काटने मे देरी मत कर।

---

(२) चीनी यात्री फाह्यान लिखता है —

"सारे भारत देश में कोई निवासी न हिंसा करता है, न शराब पीता है, यहां तक कि प्याज और लहसुन तक नहीं खाता। बस्तियों में लोग न सूअर-मुर्गी पालते हैं और न कहीं कसाइयों व शराब की दुकानें हैं।"

क्या मांस हमारा स्वाभाविक भोजन है ?

प्रश्न १–(क) जीव विज्ञान (Biology) के अनुसार मनुष्य का विकास पशुओं से हुआ है। अतः शुरू में मनुष्य भी पशुओं जैसा था। वह पशुओं की तरह जंगली, शिकारी और मांसाहारी (Non-vegetarian) था।

(ख) इतिहास के अनुसार –पत्थर-युग में मनुष्य पत्थरों के हथियारों से पशुओं का शिकार करता और शायद उनका कच्चा ही मांस खा जाता था। धातु-युग में उसने आग और लोहे के बर्छी-भाले बना लिये। तब वह मांस को बरतनों में पका कर खाने लगा।

इससे सिद्ध होता है कि दुनिया के आरंभ से ही मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है। तब से आज तक मनुष्य पीढ़ी–दर-पीढ़ी मांस खाता चला आ रहा है।

उत्तर– मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन न कभी था, न अब है और न कभी आगे होगा, क्योंकि —

(क) **मनोवैज्ञानिक प्रमाण**–मनोविज्ञान (Psychology) के आचार्य प्रो॰ मैकडनल के अनुसार—(i) '**जन्म से मिले हुए, मन के कुदरती झुकाव को 'स्वभाव'** कहते हैं।" इससे किसी चीज़ की तरफ हमारा ध्यान अपने आप खिंच जाता है। उसे पाने के लिये हमारे अन्दर तेज लहरें उठने लगती हैं, हमारे अंग फड़फड़ाने लगते हैं और उसे हथियाने के लिये हम अपने आप ही तरह-तरह की हरकतें करते

हैं। (ii) स्वभाव हमें सीखना नहीं पड़ता बल्कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी संतान को कुदरत से अपने आप मिलता चला जाता है। (iii) स्वभाव जाति के सब लोगों में अवश्य पाया जाता है, न कि कुछ इने-गिने लोगों में। जो कुछ हो लोगों में पाया जाये और कुछ में नहीं, वह उस जाति का स्वभाव नहीं होता।

स्वभाव की इन तीन शर्तों में से एक भी शर्त मनुष्य के मांसाहारी (Non-Vegetarian) भोजन पर लागू नहीं होती, क्योंकि— (i) मनुष्य का बच्चा जन्म से ही मांस नहीं खाता बल्कि (ii) जन्म के बाद मनुष्य मांस खाना सीखता है। जन्म के बाद सीखी हुई बात को 'आदत' कहते हैं, न कि स्वभाव। (iii) सारी मनुष्य जाति मांस नहीं खाती बल्कि कुछ इने-गिने लोग ही खाते हैं। अतः मांस खाना मनुष्य का स्वभाव नहीं है।

(ख) जीव-विज्ञान का प्रमाण—जीवविज्ञान के सबसे बड़े आचार्य डार्विन ने सिद्ध किया है कि मनुष्य का विकास बानर जाति के बंदर, लीमूर और वनमानुष आदि से हुआ जो मांस नहीं खाते थे। प्रो० लल का कहना है — *"वनमानुष और चिंपैंजी का रक्त मनुष्य के रक्त के समान है।"* प्रो० जे० रीड मायर के अनुसार *"बंदर जाति से मनुष्य का विकास आज से १०-११ लाख वर्ष पहले हुआ था।"* अमरीका के प्रो० ओसवोर्न का दावा है—*"आज से १ करोड़ ५० लाख वर्ष से भी बहुत पहले बंदर-शाखा से मनुष्य अलग हो चुका था।"* इस प्रकार तीन बातें सिद्ध हुईं— (i) मनुष्य का विकास बंदर जाति से हुआ। (ii) बंदर जाति लाखों वर्षों और हजारों पीढ़ियों से मांस नहीं खाती और शुद्ध शाकाहारी (Vegetarian) है। अतः (iii) बंदर जाति से विकसित मनुष्य जाति भी जन्म से और स्वभाव से भी शाकाहारी है न कि मांसाहारी। यह असंभव (Impossible) है कि शाकाहारी पूर्वजों की संतान मांसाहारी

पैदा हो। इसके उलट जीवविज्ञान और इतिहास से सिद्ध होता है कि शुरु में मनुष्य बंदरों की तरह पेड़ों पर रहता था। प्रो० केलाग (Kellog) लिखते हैं –*"गिलहरी फल खाती है। पर जब फल नहीं मिलते तो भूखी मरती हुई चिड़ियां भी खा लेती है। वैसे मनुष्य भी फल खाता था। हाँ, पहले मनुष्य भी शाकाहारी था; जब जंगलों में फल न रहे तब पशुओं की देखादेखी वह भी भूख मिटाने को मांस खाने लगा।"*

(ग) धर्मशास्त्र का प्रमाण–प्राय: सब धर्म, धर्मशास्त्र और विशेषकर वैदिक शास्त्र मानते हैं कि – दुनिया के आरंभ में हमारे और आप जैसे सभ्य और पूरे विकसित मनुष्य पैदा हुए, न कि पशु जाति से मनुष्यों का विकास धीरे-धीरे हुआ। (i) यजुर्वेद के ३१वें अध्याय में लिखा है – *'ततो विराड् अजायत ...... पुरुषं जातमग्रत:। तेन देवा अयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये"* अर्थात् विराट् (Solar Universe) से क्रमश: आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी बने। (ii) *संभृतं पृषद्......शूद्रो अजायत।"* पृथ्वी पर पहले वनस्पति (Vegitable) फिर पक्षी, फिर पशु, फिर मनुष्य पैदा हुए। (iii) ऋग्वेद १।१६४।१५ के मंत्र में साफ लिखा है–एक साथ पैदा वस्तुओं में जोड़े ऋषि और देव पुत्र भी पैदा हुए। (iv) मनुस्मृति में लिखा है–*यानि कर्माणि यस्मिन् स न्ययुंक्त प्रथमं प्रभु:। स तदेव स्वयं भेजे सृज्यमान: पुन: पुन:।* मनु-१।२८। अर्थात् पृथ्वी पर अनुकूल परिस्थिति पैदा हो जाने पर परमात्मा ने अपने-अपने कर्मों के अनुसार जीवों को अलग-अलग योनियों में पैदा किया। (v) ऋग्वेद मण्डल १। सू० ५१। के आठवें मंत्र में कहा गया है–*दुनिया के आरंभ में दो तरह के मनुष्य पैदा हुए–आर्य (सभ्य मनुष्य) और दस्यु* (असभ्य मनुष्य)......इन प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि दुनिया के शुरु में सभ्यलोग वेदों के विद्वान थे और वेदों में मांस खाना पाप लिखा है, इसलिए ऋषियों की संतान शाकाहारी थी। हाँ, असभ्य लोग मांस खाते होंगे। इस प्रकार दुनिया

के शुरु में भी मनुष्य न तो पशुओं जैसा माँसाहारी पैदा हुआ और न तब मांस उसका स्वाभाविक भोजन ही था।

(घ) शरीर-विज्ञान (Physiology) **का प्रमाण**—प्रो० बैरन क्युवियर (Boran Cuvier) का दावा है—*"शरीर-रचना की दृष्टि से मनुष्य के अंग बिल्कुल शाकाहारी जंतुओं जैसे है। मनुष्य के अंग किसी भी तरह मांस खाने-पचाने के लिये अनुकूल नहीं।"* क्योंकि—

(i) **जबड़े और दांत**—कुदरत ने शेर आदि माँसाहारियों के दाँत लम्बे और पंजे नुकीले बनाये हैं ताकि वे मांस को चीर-फाड़ सकें। उनके जबड़े केवल ऊपर-नीचे खुल सकते हैं अतः चबा नहीं सकते। उनके दाँतों का आधा काम उनकी आँतें करती हैं जो हड्डी तक हज़म कर लेती हैं। इसके विपरीत हमारे दाँत छोटे, लगभग चपटे और केवल इतने तेज होते हैं कि ८ दाँत सब्जी और रोटी काट सकें, ८ दाँत सख्त चने और फल आदि तोड़ सकें और ८ दाढ़ें भोजन चबा सकें। मांस खाने वाले लम्बे-नुकीले दाँत न तो चिंपैंजी आदि हमारे पूर्वजों के मुख में थे और न हमारे मुँह में हैं। जबड़े ऊपर-नीचे और आगे पीछे भी खुलते हैं ताकि हम खूब पीस-चबा कर आहार अपनी आँतों को दें जो 'लक्कड़ हज़म पत्थर हज़म' न होकर साग-पात पचाने के ही योग्य हैं।

(ii) **मुँह की लार** (Saliva):—माँसाहारियों के मुँह की लार Acidic और शाकाहारियों की Alkaline होती है, अर्थात् हमारी लारमें टियालिन (Ptyline) होता है जो श्वेतसार (Strach) को पचाता है। मांसाहारी श्वेतसार नहीं खाते अतः उनकी लार में टियालिन भी नहीं होता।

(iii) **पाचन नली** (Alimentary Canal)—डाक्टर जियाफ्रे एल० ह्वे के शब्दों में—*"मांस को गलाने-सड़ाने में बेक्टीरिया (कीटाणुओं)*

का बड़ा हाथ है जो मांसाहारियों की नली में मांस को पचाते हैं। इन्हीं बैक्टीरियों को आंत से बाहिर फैंकने के लिये मांसाहारियों की आंत की लंबाई बहुत छोटी रखी गई है।" मांस ठोस पदार्थ है। थोड़ा खाया जाता है, उसे थोड़ी जगह चाहिये। यह जल्दी सड़ने लगता है अत: नली में अधिक देर तक नहीं रह सकता। उसे झटपट बाहिर निकालने के लिये मांसाहारियों की नली प्रकृति ने जान-बूझ कर छोटी रखी है। वह मांस को पचाने के लिये बहुत अनुकूल है। इसके विपरीत मनुष्य की पाचन-नली माँस को पचाने के लिये बिल्कुल अनुकूल नहीं है क्योंकि वह बहुत लंबी—३२ फुट—जिसमें साग-सब्जी अढाई-तीन घंटे तक रहती है। इतनी देर तक तो मांस में सड़ांद पैदा होकर वह शरीर को रोगी बना देती है। मांसाहारियों को मांस इसलिए जल्दी हजम हो जाता है कि उनके पाचन-अंगों में हमारी अपेक्षा १० गुना हाईड्रोक्लोरिक एसिड होता है जो मांस ही नहीं, बल्कि उसके साथ निगली हुई हड्डियों को भी हजम कर लेता है। मांस को पचाने की यह तेज ताकत हमें नहीं मिली है। हमारी पाचन-नली तो प्रकृति ने खास कर साग-सब्जी, दाल-रोटी के लिए ही बनाई है; जिसमें तन्तु-मात्रा (Roughage) अधिक होता है। वह अधिक खाई जाती है, अधिक जगह लेती है और नली में देर तक रह कर भी सड़ांद पैदा नहीं करती। हमारा आमाशय पेचीदा, छोटी आंतें छल्ले-दार तथा बड़ी आंत लंबी एवं गड्ढ़ेदार होती हैं। भोजन इनमें घूमता-फिरता हुआ देर तक रह सकता है और झटपट बाहिर निकालने का उतावलापन नहीं होता। इसके विपरीत मांस खाने वाले जंतुओं का आमाशय साधारण तथा गोल होता है। उनकी आंतों की लंबाई कम, और उनकी बड़ी आंत सीधी, सरल और छोटी होती है। इनमें मल को झटपट बाहिर निकालने की ताकत होती है। इस प्रकार माँस खाने, पचाने, तथा शीघ्र मल निकालने की कोई भी सुविधा हमें प्राप्त

नहीं है, फिर भी हम यदि मांस खायें तो वह अपने अंगों पर हमारी जोर-जबरदस्ती है। हम उसे हजम नहीं कर सकते, तो हार कर बीमार पड़ जाते हैं।

(iv) **पंजे-अंगुलियां-नाखून**—प्रकृति ने माँसाहारियों को तेज पंजे, तलवार मार्का नाखून और मांस को चीरने-फाड़ने के लिए सभी अंग दिये हैं। वे हमें नहीं मिले।

प्रश्न(२)—कुदरत ने मनुष्य को तेज दाँतों और नाखूनों के बदले तेज दिमाग दिया है, जिससे वह चाकू, बर्छी, भाले और बूचड़खाने बना कर तगड़े से तगड़े पशु को मार कर सख्त से सख्त मांस को काट सकता है।

उत्तर सच पूछिये तो मनुष्य के दिल-दिमाग को मांस से कुदरती नफ़रत है। क्योंकि (i) जो लोग मांसाहारी नहीं, उन्हें और उनके बच्चों को मांस को देखते हो घृणा होती है। स्त्रियों और बच्चों को उलटी तक आ जाती है। उनके लिए माँस पकाना तो दूर रहा, पकते हुए मांस की बदबू से ही उनका दिल मितलाने लगता है। (ii) बकरे और मुर्गे को मरते-तड़पते देखकर तो अधिकांश मांसाहारियों का भी दिल कांप जाता है और कई तो कसाई की छुरी तले तड़पते पशुओं के दृश्य से बेहोश भी हो जाते हैं। पशु को स्वयं मारने के लिये शायद ७५% माँसाहारी भी तैयार न हों। (iii) क्या इनसे यह सिद्ध नहीं होता कि मनुष्य का दिल-दिमाग भी कुदरत ने मांसाहार के लिए नहीं बनाया, क्योंकि वह हिंसा से काँपता है और दया करके खुश होता है। माँसाहारी जन्तु स्वयं मार कर खाते हैं। मरे मुर्दों को खाने वाले गीध, गीदड़, कौए आदि सड़े-गले शवों को भी चट करने के लिए या सफाई के लिए कुदरत ने बनाये हैं। उनसे बराबरी करना मनुष्य की शान के खिलाफ है। (iv) इससे सिद्ध होता

है कि मनुष्य को ऊंचे दर्जे का दिमाग ज्ञान-विज्ञान के ऊंचे काम करने के लिए मिला है न कि पशुओं जैसे खूनी काम करने लिए। कुदरत ने मनुष्य से भी पशु कटवाने होते तो उसे भी वह पशुओं जैसा निर्दयी दिल और खूंखारों जैसा खूनी दिमाग देती।

प्रश्न(३)—ये तो कमजोर दिल के लोगों के उदाहरण हैं। शिकार और हलाल या झटका करना बहादुरों के काम हैं। वे एक क्या, बीसियों बकरे एक साथ काट दें, तो भी कांपते नहीं। असली मांसाहारी तो खुद शिकार करके खाना पसंद करते हैं। फिर यह आदत की बात है। शुरु में मारने-काटने का अभ्यास नहीं होता तो कमजोरों का दिल घबराता है। धीरे-धीरे अभ्यास करते-करते उनका दिल पक्का हो जाता है तो फिर देखिये कसाई किस मजबूती से शिकार मारता है, रोज मारता है, दिन-रात मारता है। पर क्या मजाल कि 'सी' तक कर जाये!

उत्तर—यदि मारकाट करने और बेजुबान बेकसूर गरीबों को तलवार के घाट उतारने का नाम ही बहादुरी है तो आप कोटला जट्टाँ के निवासी उस 'देव' को क्या कहेंगे जिसका दिल मार-काट करने में इतना पक्का हो चुका था कि जुलाई १९७६ में उसने धनताल गांव में केवल अढ़ाई बोतल शराब के लिए दो आदमियों को मार डाला। ३०००/- के लिए संगरूर के अलाल गांव में दो साधु मार डाले। उसने कुल ३०-३२ साधु और ४-५ अन्य लोग मारे। २० सितम्बर १९७६ को पटियाला के गोहाथा गांव में शराब लूटते समय वह पुलिस की गोली से मारा गया। यदि अपनी जुबान के ज़रा से स्वाद या बुरी आदत के कारण दूसरों की हत्या करने का नाम ही बहादुरी है, तब तो 'देव' और उस जैसे डाकू, चाकूमार, बदमाश लोगों को सबसे बड़ा बहादुर कहना पड़ेगा। अपने स्वाद या आदत के लिए बेकसूर-बेजबान भेड़-बकरियों को मारना भी ऐसी ही बहादुरी

है। पुलिस की रिपोर्ट के अनुसार भारत में अपनी बिगडी हुई आदतों के कारण मार-काट और अपराध करने वाले लोगों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है।

क) १९५२ में	—		१०३४३ हत्याएं हुईं
१९६१ में	—		११११८८ ,, ,,
१९७१ में	—		१६१८० ,, ,,
ख) १९७३ में	—		१६८१६ ,, ,,
१९६८ में	—		७५५२२१ लोग मारकाट के अपराधी बने
१९७० में	—		८६५७५२ ,, ,, ,,
१९७१ में	—		९४३३९४ ,, ,, ,,
		और	३६३८६ ७ से २१ वर्ष के बच्चों ने ५२० आदमी कतल किए।

पुलिस की पूछताछ और जाँच से पता चलता है कि लोग रातों-रात अमीर बनने और अपनी गलत आदतों के कारण बढ़े हुए खर्चे पूरे करने के लिये अपराध करते हैं। यह बहादुरी नहीं, बल्कि पशुता है, क्योंकि गुरु गोविंदसिंह के शब्दों में–'सूरा सो पहचानिये जो लड़े दीन के हेत' अर्थात् जो अच्छाई के लिये लड़ता है और बुरों को नष्ट करता है, वही बहादुर है। (आगे हिंसा और पाप के प्रकरण में इस विषय पर विस्तार से लिखा है।)

इस प्रकार मारकाट करना मनुष्य का स्वभाव नहीं, प्रत्युत पशुओं का है। मनुष्य का स्वभाव तो दया है। इसीलिये तो भेड़-बकरों को कटते-तड़फते देख कर कई लोग घबरा जाते हैं, कई बेहोश हो जाते हैं और ऐसे बहुत कम आदमी हैं जिनका दिल नहीं कांपता। *सच पूछिये तो अगर अपने आप पशु को मार-काट कर मांस खाना पड़े तो लाखों-करोड़ों लोग मांस खाना छोड़ दें।*

क्या डाक्टरों की राय में—
मांस स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है ?

प्रश्न—कई डाक्टर लोगों को मांस खाने की सलाह क्यों देते हैं?

उत्तर—लोग मांस खाते हैं अतः डाक्टर उन्हें मांस खाने की सलाह भी देते है। डाक्टरों को भी मांस की सलाह देने की आदत-सी पड़ गई है। कुछ डाक्टर मांस खाने की सलाह देते हैं तो बहुत से डाक्टर मना भी करते हैं। इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध Dr. Alexander Haig (डा. हेग) ने अपनी पुस्तक Diet and food अर्थात् 'भोजन और स्वास्थ्य' में लिखा है—

(i) असल में मांस से उत्तेजना (Excitement) बढ़ती है, न कि ताकत। ताकत और चीज है, उत्तेजना और चीज। यूं समझिये कि ताकत तो मंद-मंद जलते हुए दीपक के समान है, जब कि उत्तेजना भड़कते-भभकते (Explosive) पैट्रोल की तरह है। शाकाहार से धीरे-धीरे ताकत बढ़ती है जो टिकाऊ होती है। मांस खाने से मनुष्य पहले जोश अनुभव करता है और समझता है कि मेरी ताकत बढ़ रही है पर शीघ्र ही भड़कती हुई उत्तेजना बुझ जाती है और मनुष्य पहले से भी अधिक थका-हारा सा अनुभव करता है। शाकाहारी धीरे धीरे ताकत पकड़ता है और बड़े धीरज के साथ उसे काम लाता है, उसमें दम (Stamina) अधिक होता है, वह देर तक कठोर परिश्रम, युद्ध, संघर्ष और दौड़-धूप कर सकता है। माँसाहारी शीघ्र ही हाँपने-काँपने लगता है।

(ii) माँस, शोरबा या माँस से बनी हुई दवाइयां खाने से एक तरह का सिर दर्द पैदा हो जाता है और माँस छोड़ने से वह ठीक हो जाता है।

(iii) डा० हेग अपनी पुस्तक 'Uric Acid is A Factor in the Congession of Diseases' में आप बीती का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

"सन् १८८४ में मैं Migraine रोग से परेशान हो गया। मैंने मैंने कई दवाइयां खाईं। पर कोई लाभ न हुआ। हार कर मैंने मांस खाना छोड़ दिया। पहले दूध और मछली पर गुजारा किया। फिर मछली भी छोड़ दी और केवल दूध और पनीर खाने लगा। अब मैं मांस नहीं खाता और अच्छा हूँ। बिना मांस के मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है अतः मैंने मांस खाना बिल्कुल छोड़ दिया है।"

मांस खाने से रोग क्यों होता है और छोड़ने से लाभ क्यों? असलियत जानने के लिए हमें मांस की वैज्ञानिक जांच करनी चाहिए—

(i) **मांस की रचना** (Composition)

क्रम	भेड़ का मांस	बकरी का गोल मांस	बकरी का जिगर	मछली	बतख का अंडा	मुर्गी का अंडा
१. ऊर्जा	१६४	११८	१०७	१००	१८०	१७३
२. प्रोटीन ग्राम	१८.५	२१.४	२०.०	२१.५	१३.५	१३.३
३. वसा ,,	४.४	३.६	३.०	१.६	१३.७	१३.३
४. शर्करा ,,	—	—	—	—	७	—
५. तंतु ,,	—	—	—	—	—	—
६. कैलशियम	१५	१२	१७	६	६	२
७. फासफोरस	१५	१९२	२७९	४९	२६	२२
८. लोहा	२५	—	—	२३	३०	२९
९. विटामिन ए	३९	३१	२२३००	२६	९००	१०००
१०. विटा० सी	६८	—	२०	३९	२	१

नोट :— ६ और ७ का यूनिट मि० ग्राम है।

अब से लगभग ३० वर्ष पहले डाक्टरों की यह राय वती थी कि मांस से मनुष्य को अच्छी प्रोटीन मिल सकती है। अब वह पुरानी हो चुकी है। असल में चूहों पर प्रयोग करके वह राय बनाई गई थी। मनुष्यों पर किए गये ताजा प्रयोगों के आधार पर अमरीकी येल यूनिवर्सिटी के डाक्टर रसल एच० चिटिंडन, Ph.D. L.L.D., Sc.D. ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Physiological Economy in Nature' में लिखा है — *मैं अपने पर तथा अन्य कई डाक्टरों पर प्रयोग करने के बाद इस नतीजे पर पहुंचा हूँ कि मांस की जरूरत से ज्यादा प्रोटीन ताकत देने के बदले हानि पहुंचाती है।"* हमें २४ घंटों की ताकत के लिए ५५ ग्राम प्रोटीन चाहिए जो हमें अपने साधारण भोजन से ही मिल जाती है। औसत हिन्दुस्तानी को जो भोजन नसीब होता है वह इस प्रकार है —

	२४ घंटों में जितना चाहिये	२४ घंटों में जो मिलता है।	नाम आहार	प्रति १०० ग्राम में कितनी प्रोटीन है।
उचित भोजन	७०० ग्राम	४५० ग्राम	गेहूँ	१२ ग्राम
कैलोरी	२२५० ,,	१८०० ,,	चावल	६.८ ,,
दूध	२८० ग्राम	११० ग्राम	दालें	२२ से ३० ,,
शक्कर		५० ,,	केले	१ से २ ,,
प्रोटीन	५५ ,,	४५ ,,	दूध	३ से ५ ,,
केला आदि	३८० ,,	१४५ ,,	चीनी	०.१ ,,

कोई मांस खाये, या न खाये, वह रोज दाल-रोटी तो जरूर खाता ही है और उसी से उसे कम से कम ४५ ग्राम प्रोटीन अवश्य मिल जाती है। जो गरीब नहीं उन्हें पूरी मात्रा—५५ ग्राम प्रोटीन भी मिल जाती है। निश्चित ही मांस की अधिक प्रोटीन हमारे हाजमे पर बोझ बनेगी।

Dr. Marr S. Brown अपनी पुस्तक ["Reasons for a Vegetarian Diet" में लिखते हैं —"हो सकता है कि शुरु में कुछ देर तक लोगों को मांस खाने की कोई हानि दिखाई न दे लेकिन देर या सवेर से उन्हें इस गैर-इन्सानी भोजन के परिणाम अवश्य भुगतने पड़ते हैं, क्योंकि इससे उनका जिगर और गुर्दे बिगड़ जाते हैं और वे ठीक ढंग से काम नहीं कर सकते। फिर धीरे-धीरे वे गठिया और टी०बी० के शिकार बनते हैं।"]

(२) वध्य (Killed) पशु-पक्षी की अवस्था

स्वास्थ्य-सिद्धान्त के अनुसार यह आवश्यक है कि कुछ भी खाने-पीने से पहले हम देख, सूंघ और चख कर जांच लें कि वह हमारे लिए खाने योग्य और स्वास्थ्य-वर्धक है या नहीं। बाजारी मांस के बारे में हमें पता नहीं कि (i) कैसे पशु या पक्षी का वध किया गया है? वह रोगी था या नीरोग ? युवा था या बूढ़ा ? देखने में आया है कि प्रायः जो पशु बूढ़ा, बीमार या मरने वाला हो जाता है, उसे मालिक कसाई के हाथ बेच देते हैं। ऐसे पशुओं का माँस निश्चय ही बीमारी की जड़ होता है। १६२० में जर्मनी में कार्ल डैंके नामक एक होटल मालिक ने लोगों को आदमी का माँस परोसना आरंभ कर दिया। जब वह ३० से अधिक लोगों की हत्या कर चुका तो एक दिन जिस आदमी को वह मारने लगा उसका दांव कार्ल डैंके पर पड़ गया। खूब मारपीट, उखाड़-पछाड़ होने लगी। शोर सुन कर लोग और पुलिस पहुंच गई। तलाशी लेने पर कई कनस्तरों में आदमी का कच्चा मांस भरा था, पतीलों में पका मांस तैयार था और बोरियों की बोरियाँ हड्डियों से भरी पड़ी थीं। लखनऊ का एक होटल वाला भी आदमी के बच्चों का मांस ग्राहकों को खिलाता पकड़ा गया। एक दिन एक बच्चे की नाखून वाली अंगुली का टुकड़ा प्लेट में से निकला तो उसकी हत्याओं का रहस्य खुला। इसी प्रकार एक कसाई कुत्ते का मांस बेचते हुए

पकड़ा गया। इस तरह न जाने माँसाहारी लोग किस-किस जन्तु का कैसा गंदा मांस खरीद कर लाते हैं, पर उन्हें गन्दगी का पता तक नहीं चलता। ऊपर से ताजा दिखाई देनेवाले साधारण हर एक मांस में भी गुप्त रूप से रोगाणु पाये जाते हैं, क्योंकि प्रत्येक पशु-पक्षी के शरीर में उस जाति के विशेष रोगाणु होते हैं जो उनके रक्त पर पलते है। वे माँस के द्वारा हमारे अन्दर पहुँच कर मेदे में जमा होते, हमारे रसों को चूसते तथा अपना विष फैलाते रहते हैं।

(३) पशु के जाति, आयु, स्वभाव आदि

वैज्ञानिक Schieder तथा Schwann के अनुसार हमारा शरीर छोटे-छोटे अणुओं से बना है जिन्हें कोषाणु (Cell) कहते हैं। ऐसे ही सैल वनस्पतियों में भी होते हैं। इंग्लैंड के प्रसिद्ध डाक्टर और आहार-विशेषज्ञ (Dietician) टामस मफेट ने प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया कि *"हम जैसी खुराक खाते हैं वैसे ही हमारे शरीर के कोषाणु (सैल) बनते हैं। जो गुण खुराक में होते हैं वे ही हमारे शरीर में आ जाते हैं।"* इटली के स्वास्थ्य-वैज्ञानिक Gimbattista Porta लिखते हैं— *"कुछ पेड़-पौधों की आयु लंबी होती है और कुछ की आयु बहुत छोटी होती है। उसी के अनुसार उनके कोषाणुओं की आयु भी लंबी या छोटी होती है। लंबी आयु वाले सागपात-फलफूल खाने से मनुष्य की आयु लंबी होती है और कम आयु वाले आहार खाने से आयु छोटी होती है।"* यूरोप के प्रसिद्ध आहार-शास्त्री Dr. William Metcalf ने अपनी पुस्तक *"पशु-माँस खाने से परहेज रखो"* (Abstinence from the flesh of Animals) में लिखा है—*"हमें उत्तम स्वास्थ्य के लिए किसी भी सूरत में मांस नहीं खाना चाहिए। वह लाभकारी होने के बदले हानि पहुँचाता है"* क्योंकि—अधिकतर पशु-पक्षियों का जीवनक्रम छोटा (Short span of life) होता है, अतः उनके कोषाणु भी छोटी आयु वाले होते हैं। इसके विपरीत हमारी आयु लम्बी होती है। जब पशु-पक्षियों के छोटे

जीवनक्रम वाले कोषाणु हमारे कोषाणुओं से मिलते हैं जो हमारे कोषाणु कमजोर पड़ जाते हैं। इससे हमारे स्वास्थ्य को भारी धक्का पहुँचता है।

(४) **वध** (Slaughter) **से मांस में रासायनिक विष**

पशु का वध करते समय भयंकर भय, दर्द और तड़पन से उसी क्षण पशु के हृदय को भारी धक्का लगता है। इससे रक्त का रासायनिक निर्माण एकदम जहरीला बन जाता है। भय का यह भयंकर विष पशु के रक्त में बिजली की फुर्ती से दौड़ जाता है। इसे रासायनिक विष कहते हैं। यह विष एकदम उसके सारे शरीर और माँस को विषैला बना डालता है। माँस के द्वारा वह विष हमारे तन मन में घुलकर हमारे मन को राक्षसी और खूंखार बनाता है तथा शरीर को ऊपर से मोटा-ताजा लेकिन अन्दर से धीरे-धीरे कमजोर बनाता है। इसे बोलचाल की भाषा में 'हाय लगना' कहते हैं।

(५) **मांस की ताजगी** (Preserving Capacity)

हर वस्तु में ताजा रहने का स्तर अलग-अलग होता है। कई वस्तुएं गर्मी से शीघ्र सड़ने लगती हैं, जैसे दही, सब्जी, फल, कन्दमूल। मांस इन सबसे जल्दी सड़ता है, क्योंकि उसमें रक्त अधिक होता है। कौन देखता है कि जो माँस हम खरीद लाये हैं वह कब कटा? कब तक कहाँ पड़ा रहा? कटने के बाद चूल्हे पर चढ़ने तक जितना अधिक समय लगता है उतनी ही अधिक सड़ाँद (Decomposition) बढ़ती जाती है। उसे ताजा रखने के लिए रैफ्रिजरेटरों में रखकर उसकी सड़न व सड़ांद पर केवल पर्दा ही डाला जाता है, लेकिन तेज ठण्ड से उसके कोषाणु तेजी से सिकुड़ते हैं जिससे शक्ति वाले तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। शेष तत्त्व बाद में तेज आँच पर जल जाते हैं। बासे माँस को ताजा दिखाने वाले विषैले मसाले जले पर नमक छिड़कने का काम करते हैं। इनकी अम्लता हद दर्जे तक पहुँच सकती है, जिससे धीमी

गति से विष (Slow Poisoning) बढ़ता है। कोई भी असली माँसाहारी शिकारी जानवर भी बहुत पहले मरा पशु नहीं खाता। सब ताजा शिकार मार कर खाते हैं। चील, कौए और गीदड़ की बात ही अलग है। महीनों पहले डिब्बा बन्द या टयूब-बन्द माँस को फैक्टरी का ताजा (Factory fresh) कह कर बेचा जाता है। ऐसे तथा वैसे बासी मांस के विषय में डा० जॉन लर्व कैलाग लिखते हैं—*"खेत में मरी गाय-भेड़ को सड़ा हुआ गन्दा मांस* (Carrion) *कहा जाता है। वैसे ही मुर्दे को जब कसाई सजा-संवार कर 'ऊँची दूकान' पर रखता है तो उस 'फीके पकवान' जसे मुर्दे को "भोजन" कहा जाता है।"*

सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से देखिये तो उसमें सड़ांद के कीटाणु चुलबुलाते मिलेंगे। आप ही सोचिये कि ऐसे महादूषित मांस को खाकर आपके शरीर में ताकत बढ़ेगी या रोग?

(६) हाज़मा (Digestibility)

हर एक माँस में पचने की शक्ति अलग-अलग होती है—कोई हल्का होता है जो कुछ जल्दी हज़म होकर हमारे ऊतकों (Tissues)में मिल सकता है, और कोई इतना भारी कि हमारी आंतों में ही अटका रह जाता है। इसी प्रकार खाने वालों की अपनी हाजमा-शक्ति भी अलग-अलग होती है, क्योंकि हम पीछे पढ़-समझ चुके हैं कि माँसाहारी पशुओं का हाजमा कुदरत ने ही मांस पचाने के अनुकूल बना दिया है। लेकिन मनुष्य का हाजमा न वैसा तेज है और न वह मांस ठीक-ठीक पचा सकता है।

विश्व-स्वास्थ्य-संगठन (WHO) ने १५ देशों में लोगों की डाक्टरी जाँच के बाद १८ अप्रैल १९७५ को एक रिपोर्ट प्रकाशित की है, जिसका शीर्षक है—*"मनुष्य की ऊर्जा और प्रोटीन की आवश्यकताएँ।"* इसमें बताया गया है कि—*"हमारे शरीर के लिए प्रोटीन की कितनी*

आवश्यकता है । इसका नाप-तोल पांच बातों पर निर्भर करता है—मनुष्य को आयु, शरीर का वजन, उस प्रदेश का जलवायु, खाने वाले मनुष्य का शारीरिक श्रम और भोजन की सुपाच्यता (Digestibility) ।

विश्व-स्वास्थ्य-संगठन के 'विश्व-स्वास्थ्य' पत्र के 'पोषक आहार' (Nutrition) नामक अंक में प्रो० Liesl Graz ने 'आहार के १०,००० वर्ष' शीर्षक लेख में सिद्ध किया है—

(क) "आदिकाल में मनुष्य शाकाहारी था । केवल बाद में वह शिकारी भी बन गया । दुनिया के लोगों के खाने के वास्ते संसार में जहां-तहां अनगिनत किस्म की चीजें भरी पड़ी हैं ।"

(ख) "अधिकतर लोगों के लिए प्राणरक्षा का आधार अनाज है; अर्थात् गेहूँ, चावल, मक्का, ज्वार, धान आदि । सहारा रेगिस्तान के कई भागों में लोगों का परम्परागत भोजन मुख्यतः खजूर है ।"

'मांस के बिना स्वास्थ्य' शीर्षक के अन्तर्गत वे लिखते हैं—

"Trappist पादरी तपस्वियों पर किये गये अनेकों परीक्षणों से यह सिद्ध होता है कि मांस खाये बिना भी मनुष्य केवल शाकाहारी भोजन खाकर ही पूर्ण स्वस्थ रह सकता है । उनका जीवन कठिन तपस्या और कठोर परिश्रम करते हुए बीतता है । गले में सफेद चोगा और सिर पर काली बैरागी टोपी पहनना, निरन्तर मौन व्रत का अनुष्ठान करना, रात-रात भर जागते हुए भजनोपासना करते रहना और खेती करना—यही उनकी जीवन-साधना है । ऐसा कठोर जीवन बिताते हुए भी वे खाते क्या हैं—गेहूँ या जौ की रोटी, दलिया, फलियां, फलफूल, साग-सब्जी और दूध जिसमें अंडे का नाम-निशान नहीं होता । ऐसे कठोर तपस्वी जीवन में दीक्षा लेने के बाद बारम्बार उनकी डाक्टरी परीक्षा की गई तो हर बार उनका स्वास्थ्य उत्तम से उत्तम

हो निकला और अन्य लोगों की अपेक्षा उनकी औसत आयु भी काफी लम्बी पाई गई।"

विश्व-स्वास्थ्य-संस्था (WHO) द्वारा प्रकाशित इन परीक्षणों से बढ़कर शाकाहार के पक्ष में तथा मांसाहार के विरोध में और क्या बड़ा प्रमाण हो सकता है?

यह १००% सच है कि **मांस** के साथ रोटी भी पहले से दुगुनी खाई जाती है। मांस की अपनी प्रोटीन मात्रा में इतनी अधिक और पचने में इतनी भारी होती है कि उसे ८ घण्टे सख्त से सख्त मेहनत करने वाला मजदूर भी नहीं पचा सकता; फिर साधारण लोगों का तो कहना ही क्या? ऊपर से फालतू रोटी के फालतू बोझ को हमारा नाजुक हाजमा सहन नहीं कर सकता। फालतू भोजन शरीर में ताकत देने के बदले सड़ने लगता है और उसके दो बुरे असर होते हैं—
(क) हानिकारक प्रतिक्रियाएं (Reactions) और (ख) रोगों का जन्म

(७)—क—जब मांस हमें खाने लगता है! अर्थात्—माँसाहार की हानिकारक प्रतिक्रियाएं (Reactions):—

इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध डाक्टर एलेग्ज़ैण्डर हेग (Dr. Haig) ने अपनी पुस्तक 'Uric Acid is a factor in the Congession of Diseases' में लिखा है—*"मांस से हमारे शरीर में यूरिक एसिड बहुत बनता है जिससे कई रोग पैदा होते हैं।"* क्योंकि इससे—

१. जिगर (Liver) **बिगड़ता है**—बाहिर से आये और अन्दर पैदा हुए विष के साथ हमारा जिगर लड़ता है, क्योंकि जिगर के पित्त का काम है—विषैले तत्वों को कमजोर (Neutralise) करना। जब लगातार माँस-भक्षण से विष की मात्रा बहुत बढ़ जाती है, तब जिगर भी हार जाता है। इससे हमारे हाजमे का सारा कारखाना खराब हो जाता है; भोजन नहीं पचता, जिससे ऊर्जा (Energy) या ताकत

बननी बन्द हो जाती है। क्षय (T.B.) और जिगर के रोग शुरू हो जाते हैं। १९७५ में छपी भारत सरकार के स्वास्थ्य-विभाग के महानिर्देशक की रिपोर्ट से पता चलता है कि (i) भारत में दिनों-दिन जिगर के रोगियों की संख्या बढ़ती जा रही है। (ii) यह रोग अधिकतर खुशहाल लोगों में और मांस अधिक खाने वाले प्रान्तों में बढ़ रहा है। (iii) क्षय रोग भी बढ़ रहा है विवरण के लिए तालिका देखें :—

प्रांत का नाम	प्रांत की कुल जनसंख्या	जिगर के रोगियों की संख्या	क्षयरोगियों की संख्या
बंगाल	४४३१२०११	१९५६—१२७८३७	१९५६— ६८३८४
		१९६१—४९१४३०	१९६५— ७८७९१
		१९६२—६९१६९५	१९६९— ६१६४४
तमिलनाडु	४११९९१६८	१९५६—२२०६२	१९५६—१५६७९९
		१९६१—२२५१७	१९६४—३६१४०७
		१९६२—३०२५५	१९६७—३८२०८८
उड़ीसा	२१९४४६१५	१९६१—५१४३	१९५६—६२४०
		१९६४—८६०२	१९७०—५९१३३
		१९६७—१०२३४	१९७१—९७५९६

(स्वास्थ्य-मंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशित)

यह तो केवल उन रोगियों की संख्या है जो अस्पतालों में इलाज के लिये पहुँचे। इससे दस-बीस गुणा अधिक क्षय और जिगर के ऐसे रोगी भी होंगे जो निजी तौर पर इलाज करा रहे हैं या जो रोग से मजबूर नहीं और इसीलिये अस्पताल नहीं पहुंचे।

२. अम्लता बढ़ जाती है :—मांसमें और खासकर मुर्गे के गोश्त एक पेचीदा (Complex) प्रोटीन होती है। इस भारी प्रोटीन को पचाना मनुष्य के हाजमे का काम नहीं, क्योंकि यह अम्लता-प्रधान (Predominantly Acidic) होता है, अर्थात् इससे हमारे रक्त में अम्लता (खट्टास) हद से ज्यादा बढ़ जाती है, जिससे कैल्शियम और सोडियम आदि दूसरे जरूरी लवण घटते-घटते बिल्कुल खत्म से हो जाते हैं। इससे रक्त की प्रवृत्ति (Tendency) ही अम्लता बढ़ाने वाली बन जाती है। आंतों को खट्टा करने वाले कीटाणु, सड़न पैदा करने वाले कीटाणु बन जाते हैं। सड़ांद से विषैले रस (Toxins) रक्तमें घुल-मिल जाते हैं, जिससे रक्त-विष (Blood Poisoning) का डर रहता है। खून के द्वारा यह विष सारे शरीरमें पहुंच कर रोग पैदा करता है।

३. आंतों में मल इकट्ठा होता है—फ्राँस के प्रसिद्ध डाक्टर लूकस शैम्पोनियर (Lucas Champoniere) के विचार में माँस खाने से अनपचे भोजन का कुछ अंश तो मल के द्वारा निकल सकता है लेकिन कुछ अंश विजातीय-द्रव्य (Foreign Matter), या यूँ कहिये कि फालतू प्रोटीन और चानी चर्बी, आँव आदि बनकर आँतों में इकट्ठे होने लगते हैं। इससे आँतों में रोग पैदा होते हैं, खास कर आँतों का फोड़ा (Appenddecitis)। पूरी खोज के बाद उन्होंने लिखा—"असल में मैंने यह पाया है कि शाकाहारियों को अपेंडिसाइटिस का रोग होता ही नहीं।" क्योंकि यह अनपचे भोजन से होता है। ऐसे भोजन के कण जमा होने के कारण हमारी बड़ी आँत में से छोटी अंगुली जितनी एक फालतू नली हमारे पेट के निचले दाएं भाग में उग आती है। फूलते-फूलते यह फोड़ा भी बन सकती है। यह रोग आदि काल (Primitive Age) से चला आता है और ठेठ जंगली जातियों में भी आजकल-जैसा ही पाया जाता था, क्योंकि वे माँसाहारी थीं। दुनिय के एक सर्वेक्षण (Survey) के अनुसार लोगों को मारने वाले बड़े-बडे

रोगों में 'अपेंडिक्स' का नम्बर सातवाँ है। भारत-सरकार के रिकार्ड के मुताबिक कुछ प्रान्तों में अपेंडिक्स के रोगियों का विवरण हमारे सामने है—

प्रांत	अपेंडिसाइटिस आदि आंतों के रोगियों की संख्या	आंतरोगों से मृत्यु
आंध्र '६६'	१४१२६६०	२२११
असम '७२'	२०७४७४	८२
हिमाचल '५६'	३४१४८	१५
उड़ीसा '६०'	६२२५५५	६०२
बंगाल '६५'	१३३१५६१	२२४४

४. **भीतरी क्रियाओं में रुकावट**—विजातीय द्रव्यों को बाहिर निकालने में शरीर की बहुत सी जीवनी शक्ति (Vital Force) खर्च हो जाती है। इससे रक्त में शरीर के विकास तथा सुधार के लिए ताकत नहीं बचती। शरीर की सारी क्रियाएं गड़बड़ हो जाती हैं। विजातीय द्रव्य का विष चाहे कितना भी हल्का क्यों न हो, पर आखिर वह है तो विष ही; उससे सब अंग बीमार पड़ जाते हैं। मल निकालने वाले अंगों का इतना अधिक काम करना पड़ता है कि वे हार कर पूरा विष नहीं निकाल पाते। इस प्रकार दिनों-दिन विष जमा होता रहता है।

५. **मांस की तेज दुर्गन्ध का बुरा प्रभाव**—हर-एक जीवित भी पशु-पक्षी के शरीर से दुर्गन्ध आती है; किसी में कुछ कम और किसी में इतनी तेज कि हमारी नाक उसे बर्दाश्त नहीं कर सकती। परन्तु शरीर से प्राण निकलते ही उसका मांस सड़ने लगता है। जब तक दुकान पर बिकता नहीं, अधिकाधिक सड़ता रहता है, और तब तक सड़ता रहता है जब तक हमारे पेट से बाहिर नहीं निकल जाता।

मछली या वासी मांस का तो कहना ही क्या। मांस की इस तेज दुर्गन्ध को ऊपर से नमक-मसालों द्वारा हम चाहे कितना ही दबा दें, उसकी भीतरी सड़ाँद घटने के बदले बढ़ती ही जाती है। उसका बुरा प्रभाव दिल और दिमाग पर तत्काल बहुत तेजी से पड़ता है। पहली बार मछली देख कर ही बालकों का जी मितलाने लगता है और शुरू-शुरू में हर कोई माँस खाने से घृणा करता है। जहाँ मांस पक रहा हो वहां शाकाहारियों का पास से गुजरना भी असंभव हो जाता है। दो मिनट के बाद यह दुर्गन्ध धीरे-धीरे नाक से मिल जाती है और उन्हें बू का पता नहीं चलता किन्तु उसका बुरा असर मानवीय इन्द्रियों पर पड़े बिना नहीं रह सकता। इससे हमारी उत्तम शक्तियां अधमरी या बेहोश जैसी हो जाती हैं और गले से लेकर पेट और मल-मूत्र के सभी अंगों पर वेहद उल्टा रासायनिक(Chemical) प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार हम अपने भविष्य को गिरवी रख कर वर्तमान के झूठे स्वाद में भुलक्कड़ बने रहते हैं।

६. **उत्तेजना व जलन से शराब की आदत**—यूरोप के लोग उबला मांस खाते हैं किन्तु भारत में मांस को पकाने और भूनने में घंटों लगते हैं, जिससे नाजुक विटामिन तो नष्ट हो ही जाते हैं, साथ ही प्रोटीन भी पचने के लायक नहीं रह जाते जिससे बदहज़मी (Indigestion) पैदा होती है। माँस में मिर्च और मसाले डाल कर उसमें बनावटी स्वाद पैदा किया जाता है। सच पूछिये तो माँसाहारी लोग मांस नहीं खाते, बल्कि मसाले खाते हैं। इससे अन्दर जलन और उत्तेजना भड़कनी स्वभाविक है। प्यास हो तो उसे सादे ठण्डे पानी से बुझाया जा सकता है पर जलन और उत्तेजना की शान्ति के लिए मांसाहारियों को शराब पीनी पड़ती है, जो अपने आप में एक प्रकार का विष है। इसका २० % अंश आमाशय की दीवारों में जज़्ब हो जाता है। इससे उत्तेजना शान्त होने के बजाय भड़कती है। इसी

का नाम कामुकता(Sexual Excitement)है। इससे मनुष्य की बुद्धि पर पर्दा पड़ जाता है। वह राक्षसों की तरह खूब खाता है। दिनों-दिन उसकी देह फूलती है, रक्तचाप (Blood Pressure) बढ़ता है। आंखों में ज़हर सा छलकता हैं। माँस और शराब के नशे में भले-बुरे का ध्यान उसे नहीं रह जाता। फिर कौन सा वह बुरा काम है जो मांसाहारी नहीं करता।

७. **विटामिन बी की कमी**—मांस से जिगर में विटामिन बी जरूरत से कम बनने लगता है। इसकी कमी से रक्त भी कम बन पाता है। बढ़ते-बढते यही रक्तहीनता (Animia) रोग का रूप धारण कर लेती है।

८. **मुटापा बढ़ता है**—लोगों को वहम है कि माँस-पदार्थो में वसा (Fat) उच्चकोटि का होता है। असल में यह वसा इतनी जटिल और भारी होती है कि इसे पचाना सभी के बस का काम नहीं। अनपची फालतू वसा हमारे भीतरी संस्थानों (Human Organism) में इकट्ठी होकर मुटापा बढ़ाती है। प्रायः लोग इसे शुरू-शुरू में ताकत और सेहत की निशानी समझने की भूल करते हैं। उन्हें क्या पता कि उनका यही मुटापा आगे चल कर उनके जिगर, गुर्दों और हृदय को बेकार बना देगा, जिससे अनगिनत रोग पैदा हो जायेंगे।

इस प्रकार कहने को तो 'हम मांस को खाते हैं' लेकिन सच पूछो तो मांस हमें खाने लगता है, क्योंकि वह धीरे-धीरे, बारी-बारी हमारे हाजमे के अंगों—आंत, जिगर, गुर्दे, फेफड़े और दिलो-दिमाग की कार्य-शक्ति को नष्टकरके उन्हें खोखला बना देता है। इससे उनके काम में गड़बड़ी और रुकावट पैदा होती है। बढ़ते-बढ़ते यह गड़बड़ी हद से पार हो जाती है। इसी का नाम रोग है। एक रोग से दूसरा रोग, दूसरे से तीसरा—इस प्रकार मांसाहार से मनुष्य का शरीर रोगों का घर बन जाता है।

(७)–ख—मांसाहार से उत्पन्न रोग।

मांस खाने से शरीर में रोगों का तांता बंध जाता है, जो इस प्रकार से है :—

१. **अम्लता-वृद्धि** (Hyper-Acidity)–मांस का जो फालतू अंश हाजमे में पच नहीं पाता उससे पेट में हाइड्रोक्लोरिक एसिड बढ़ जाता है, जिससे बदहजमी होती है। आगे चलकर यही Dyspepsia और पेट का नासूर बनती है। पशु-चर्बी लेने से कैल्शियम अपनाने की शक्ति घट जाती है। इससे पाचन-शक्ति कमजोर होती है।

२ **अम्लता-वृद्धि से कब्ज** (Constipation)—शाकाहारी भोजन में तन्तु (Ruffage) काफी होने से मल आँतों में से आसानी से सरकता हुआ बाहर निकल जाता है, जिससे कब्ज नहीं रह सकती। किन्तु मांस में Ruffage नहीं होती, अतः उससे कब्ज होने लगती है। इससे अम्लता-वृद्धि के सब लक्षण उग्र(Acute)रूप धारण कर लेते हैं। भूख मारी जाती है, और पेट में जलन बढ़ती है। ध्यान रहे कि जुलाब (Purgatives) कब्ज की दवा नहीं है। इसका इलाज है—गलत भोजन अर्थात् मांसाहार की आदत को छोड़ना।

३. **कब्ज से बवासीर**(Piles)—कब्ज से नसों पर भारी दबाव पड़ता है, जिससे खून की धारियां फूट पड़ती हैं। गुदा के भीतर या बाहिर नसें फूलकर टिकाऊ रोग की जड़ बन जाती हैं। खुजली, जलन, दर्द और शौच के बाद भी टट्टी की हाजत बनी रहती है।

४. **रक्तचाप** (Blood Pressure)–-मांस में अधिक चर्बी के कारण उसमें कोलेस्टेराल (Cholasteral) होता है जो खून की नाड़ियों में जमाव पैदा करता है और उन्हें सिकोड़ देता है। इससे

खून का दौरा गड़बड़ा जाने से रक्त-चाप नामक हृदय-रोग बढ़ता है। इसका सबसे बड़ा कारण मांसाहार है।

५. पशुरोगों की छूत—बीमार पशु के मांसके द्वारा मांसाहारी मनुष्यों में छूत के कई रोग पहुंच जाते हैं—छूत का गर्भपात, कैंसर, रसौली, टी० बी०, रक्त व पुट्ठों में यूरिक एसिड आदि।

ये तो वे कुछ मूल रोग हैं जो मांस खाने के परिणाम-स्वरूप होते हैं। इनमें से एक-एक रोग अन्य कई भयंकर-से-भयंकर रोगों को जन्म देता है। इस विषय में दुनिया के प्रसिद्ध डाक्टरों की आप-बीती और जग-बीती आपके सामने प्रस्तुत है—

दुनिया के प्रसिद्ध डाक्टरों के अनुभव

(A) **अनेक रोग**—प्राकृतिक चिकित्सा (Naturopathy) के प्रवर्तक डा० लुई कुहनी कहते हैं, *"मांसाहार एक नहीं, अनेक भयंकर रोगों की जड़ है।"*

(B) **गठिया और क्षय**—डा० मेरी एस० ब्राऊन (Dr. Mary S. Brown) ने अपनी पुस्तक 'Reasons for a Vegetarian Diet' में लिखा है—*"हो सकता है कि मांस खाने से कुछ लोगों को शुरू-शुरू में कोई खास हानि दिखाई न दे, लेकिन देर या सवेर से इस गैर-इन्सानी भोजन को खाने के उल्टे परिणाम प्रकट हुए बिना नहीं रह सकते।"* इस भोजन से जिगर और गुर्दे खराब होकर काम करना बन्द कर देते हैं, जिससे गठिया से लेकर टी० बी० तक रोग हो जाते हैं।

(C) **गठिया** के विषय में ही डा० Parke आपबीती लिखते हैं—

"कई वर्षों से मैं गठिया रोग से परेशान था। मुझे सिरदर्द और मानसिक थकावट की भी शिकायत थी। मैंने मांस खाने की मात्रा बहुत कम

कर दी। इससे गठिया के साथ-साथ सिरदर्द और मानसिक थकावट भी जाते रहे।"—आप ही सोचिए मांस घटाने से जब इतना लाभ हो सकता है तो मांस छोड़ देने से कितना अधिक लाभ होगा ?

(D) **गठिया** के ही विषय में Dr. Henry Purdo का परीक्षण-परिणाम देखिये—"मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जो मांस खाना छोड़कर शाकाहारी बनने पर पहले से अधिक स्वस्थ बन गये। कइयों के कब्ज, गठिया और मिरगी जैसे रोग भी जाते रहे। मेरा यह पक्का विश्वास है कि मांसाहारी की अपेक्षा पक्के शाकाहारी लोग कम रोगी होते हैं।"

(E) **अपेंडिसाइटिस**—फ्रांसीसी डाक्टर लूकस शैम्पोनियर (Lucas Champoniere) ने अपने लम्बे अनुभव के आधार पर दावा किया है कि—"असल में शाकाहारियों को अपेंडिसाइटिस का रोग होता ही नहीं।"

(F) **टाईफाइड**—अमरीका के बोस्टन-निवासी प्रसिद्ध डाक्टर शिमेर (Dr. Schimer) ने तो यहाँ तक दावा किया है कि—'शाका-हारियों को टाईफाइड ज्वर हो ही नहीं सकता।"

(G) **आधा-सीसी** (Mingraine) **का दर्द**—लन्दन के डाक्टर हेग ने आपबीती में लिखा है—"१८८५ में मैं आधा-सीसी के रोग से बेहद परेशान था। कई दवाइयां खाईं, पर कोई लाभ न हुआ। निराश होकर आखिर मैंने मांस छोड़ने का निश्चय कर लिया। पहले मैं दूध और मछली पर रहने लगा। फिर दूध पनीर पर। बिना मांस खाये मेरा स्वास्थ्य ठीक रहने लगा। तब से मैं मांस नहीं खाता हूँ। इससे पहले मैंने अपने पर आहार विषयक कई परीक्षण किये थे, लेकिन कोई सफल नहीं रहा।"

(H) **कैंसर**—डा० लेफनबिल कहते हैं—"बीमार पशु का मांस खाने से कैंसर होता है।"

डा० रसल (Russel) ने अपनी पुस्तक 'Strength and Diet of all Nations' में दुनिया के कोने-कोने में किये गये अपने परीक्षणों के परिणाम-स्वरूप यह निर्णय दिया है—

(क) जो जातियां जितना अधिक मांस खाती हैं, उन्हें कैंसर का रोग उतना ही अधिक होता है।

(ख) जिन देशों में मांस कम या बिल्कुल नहीं खाया जाता, वहां कैंसर का रोग भी कम होता है।

(ग) भोजन में मांस की मात्रा बढ़ाते ही कैंसर भी बढ़ जाता है।

एक चुनौती !

प्राय: ये उन प्रसिद्ध डाक्टरों के अनुभव हैं जो पहले माँसाहारी थे और बाद में रोगी हो जाने पर जिन्होंने मांस खाना छोड़ दिया और इससे उन्हें लाभ हुआ। इससे स्पष्ट है कि उन्हें मांसाहार और शाकाहार दोनों का निजी अनुभव रहा है। अत: उनकी बात खास वजन रखती है। इसके बावजूद जो डाक्टर अपने रोगियों का रोग मिटाने के लिये मांस खाने की सलाह देते हैं—थोथी अटकल-बाजी और केवल एक रिवाज है। असल में मांस में ऐसा कोई तत्त्व नहीं जो किसी भी रोग में दवाई का काम कर सके। भोजन का काम तो ताकत देना है और ताकत वही भोजन दे सकता है जो पच जाये। बीमार का हाजमा तो पहले ही कमजोर होता है, जो साधारण दैनिक आहार से भी ताकत खींचने के योग्य नहीं रह जाता। भला, मांस को वह कैसे पचा लेगा ?

डा० पर्चस मांस के विषय में निरीक्षण-परीक्षण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि—"अनेक डाक्टरों का यह अनुभव है कि उष्ण कटिबंध (Tropical zone) में शाकाहारी लोग माँसाहारियों से अधिक स्वस्थ पाये गये हैं।"

एक भ्रम—मांस ताकत देता है ?

प्रश्न—डाक्टरों का कहना है कि–हमारा शरीर जिन मसालों या तत्त्वों से बनता है प्रायः वे सभी मुख्य तत्त्व अकेले माँस में काफी मात्रा में मौजूद हैं। अतः माँस खाने से ताकत आती है ?

उत्तर—ताकत क्या है ? इसका उत्तर विश्व-स्वास्थ्य-संगठन के पत्र 'World Health' के अप्रैल १९६९ के अंक में प्रो० Noel West ने दिया है—

शरीर को ताकत देने वाले मुख्य तत्त्व तीन हैं–कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और चर्बी। हर तरह के भोजन में मौजूद प्रोटीन या चर्बी पूरी तरह हमारे शरीर में पच-खप जाये–ऐसी बात नहीं। किसी भोजन की प्रोटीन खूब पचती है, किसी की नहीं। जो पचती है, वही ताकत बनती है।"

इससे दो बातें पता चलती हैं–(i) काफी प्रोटीन या चर्बी वाला मांस खा लेने से ही ताकत नहीं आ सकती। (ii) जो भोजन पच जाये वही ताकत देता है। हम पीछे समझ आये हैं कि मांस की प्रोटीन और चर्बी इतनी भारी होती हैं कि मनुष्य का हाजमा उसे पूरी तरह पचाकर शरीर में खपा नहीं सकता। जब मांस पचा नहीं तो उससे ताकत कैसे आएगी ? अतः ताकत तो पाचन-शक्ति पर निर्भर करती है न कि मांस पर। बैल भूसा खाकर, सूअर हमारी टट्टी खाकर और मजदूर सूखी रोटी खाकर भी बलवान् हैं। परन्तु अमीर लोग मांस, घी, दूध, मिठाई ठूंस-ठूंस कर भी दुबले हैं। जो मांसाहारी हमें स्वस्थ और बलवान् दिखाई देते हैं,वे मांस से नहीं, बल्कि अपनी पाचन-शक्ति, सुख साधन, अच्छे कारोबार, बेफिक्री, सैर, व्यायाम, अच्छे जलवायु, माता-पिता से मिले अच्छे शरीर तथा सबसे बढ़कर उस शाकाहारी भोजन के कारण हैं, जो वे खाते हैं। हम उनकी बहादुरी तब मानें

जब वे वनस्पति खाये बिना मांस को पचा कर और बलवान् बन कर दिखायें। असल में ताकत की जड़ तो वनस्पति है। आखिर भेड़-बकरी और मछलियां भी तो बनस्पति खाकर ही मांस और ताकत बढ़ाती हैं। फिर हम भी क्यों न सीधे वनस्पति खाकर ही ताकत-वर बनें। हम पशु-मांस द्वारा Second-hand ताकत क्यों लें? सीधी सी बात है कि भेड़, बकरी, मुर्गी और मछली ने दाना-दाना खा-पचा कर कई महीनों और वर्षों में जो प्रोटोन आदि अपने मांस में इकट्ठो की थी उसे हम खाकर मिनटों-घंटों में ही कैसे पचा लेंगे? क्या हमारा हाजमा पशु-पक्षियों से भी बीसियों गुणा तेज हो गया है? दूसरी बात यह है कि पशु-पक्षियों का हाज़मा अपने भोजन को पचा कर इस तरह अपने शरीर को अनुकूल बना लेता है कि उससे उनके पंख, पंजे, चोंच, नाखून, सींग, दुम आदि बन सकते हैं। अतः उनके शरीर में जमा किया हुआ प्रोटीन-चर्बी आदि का खजाना केवल उन्हीं के काम का रह जाता है, हमारे काम का नहीं। उसमें उन्हीं के अंग, उन्हीं की आदतें, उन्हीं के स्वभाव आदि छिपे रहते हैं। फिर भला उनके ताकत के खजाने को लूटकर हम कैसे ताकतवर बन सकते हैं? उनका खजाना हमारे हाजमे तथा खून-माँस के साथ न तो अच्छी तरह घुल-मिल सकता है और न ही उसके परिणाम अच्छे निकल सकते हैं। पशुओं का माँस खाने वाले मनुष्य के भी गुण, कर्म और स्वभाव पशुओं जैसे खूँखार, और क्रूर आदि बनना अनिवार्य है। पशु-मांस से हममें पशु-शरीर और पशु-बुद्धि तो जरूर बढ़ी है, पर इन्सानी ताकत नहीं। मनुष्य की बल-बुद्धि तो हमें मनुष्यों जैसा भोजन खाने से ही मिल सकती है। इस विषय में श्री कृष्ण ने गीता में स्पष्ट लिखा है—

आयु-सत्त्व-बलारोग्य-सुख-प्रीति-विवर्धना:।
रस्या; स्निग्धा. स्थिरा:, हृद्या: आहारा: सात्त्विका: प्रिया:।।

अर्थात् भोजन के चुनाव में लोगो की पसंद तीन प्रकार की है—

(i) *सात्त्विक* (ऊंचे, पवित्र) लोग ऐसा भोजन पसंद करते हैं जिससे बल,बुद्धि,स्वास्थ्य, सुख और आयु बढ़े तथा रसीला, चिकना एवं शरीर में पच-खप कर टिकाऊ और दिल-दिमाग को ताजगी देने वाला हो। (ii) *राजसिक* (न अच्छे न बुरे, मध्यम लोग) गर्मागर्म, तीखे-खट्टे, रूखे-कड़वे, तेज नमक डाल कर ऐसी चीजें खाना पसंद करते हैं जो दुःख, चिंता और रोग भड़काती हैं। (iii) *तमोगुणी* (काले दिल वाले) लोग कच्चा हो या पक्का, झूठा हो या बासा, नीरस हो या बदबूदार, सब-कुछ हड़प कर जाते हैं, जिससे दिल और दिमाग बिगड़ता है। इन तीनों में माँस कुछ राजसिक है, कुछ तामसिक। इसे खाकर मनुष्य में पशुओं जैसा बल और राक्षसों जैसी खूंखार बुद्धि बनना जरूरी है।

प्रश्न—मांस से माँस बढ़ता है। तभी माँसाहारी मोटे-ताजे होते हैं ?

उत्तर—क्या माँस जरूरी है या ताकत ? यदि माँस बढ़ने से ताकत बढ़ती तो मिचिगन पोर्टह्यूरो निवासी श्री लिवर्टन सबसे बलवान होते। उनका वजन ६४० पौंड, कमर ७४ इंच, गर्दन ४२ इंच है। काम में ढिलाई देखकर मालिकों ने उसे नौकरी से निकालने का नोटिस दे दिया। दो वर्ष में ४१७ पौंड माँस घटाकर नौकरी बची। मांसल के लिए चलना-दौड़ना, सीढ़ियाँ चढ़ना तक मुश्किल होता है। लोग 'भैंसा', 'अढ़ाई मन की लाश' कहकर चिड़ाते हैं। रिक्शा वाले बिठाते नहीं, रिश्ता मिलता नहीं और अर्थी उठाने से लोग डरते हैं।

प्रश्न—मांस खाकर शेर जंगल का राजा और सबसे बहादुर है?

उत्तर—ये सुनी-सुनाई बातें हैं। सच्चाई शिकारी जानते हैं। भारत सरकार की पुस्तक 'भारत के वन्य पशु' में जन्तु वैज्ञानिक

श्रीराम शर्मा ने लिखा है—"इस शताब्दी के आरम्भ तक शेर को पशुओं का राजा कहा जाता था...पर बाद में उसे इस पद से उतार दिया गया।" शेर के शिकारी पादरी डा० लिविंग्स्टन का दावा है—"शेर का स्वभाव नीच और कायरतापूर्ण होता है।" क्योंकि वह चोरों की तरह छिपकर, पीछे से हमला करता है। सामने की टक्कर में तो उसे हाथी, सूअर, गैंडा, गौएं और कुत्ते भी चीर डालते हैं। अफ्रीका के शिकारी सेल्मुअस ने लिखा है—"शेर अपना सिर उतना ऊंचा करके नहीं चलता, जितना किसी शानदार जानवर को ऊँचा रखना चाहिये। इसलिए भी शेर को पशुओं का राजा नहीं कहना चाहिये।" शेर में गर्जन के सिवाय और कोई बात बहादुरी की नहीं। मांसाहारी पशु हो या मनुष्य, वे आलसी, क्रोधी, भड़कीले, खूंखार, लड़ाई में उतावले और शुरू में एकदम उग्र होते हैं लेकिन देर तक लड़ने का काम करने और दौड़ने में उनका दम निकलता है। माँसाहारी सिपाही भी शुरू में भड़कते हैं पर लम्बे युद्ध में दम तोड़ देते हैं। जून १८९८ में जर्मनी में ८ शाकाहारियों से १४ माँसाहारियों का ६० मील पदल चलने का मुकाबला हुआ। पहला शाकाहारी १४½ घन्टे में पहुँचा। बाकी ७ स्थानों पर भी सातों शाकाहारी रहे। आखिरी शाकाहारी के १ घन्टे बाद पहला माँसाहारी पहुँचा। १७ माँसाहारी ३५ मील तक हार गये। सच है–माँसाहारियों में राक्षसीपना और पशुबल भले ही हो, पर मानवीय मनोबल एवं आत्मबल नहीं होता। डा० हेग का दावा है—"माँस और शराब से स्नायु और दिल कमजोर होते हैं और मनुष्य जीवन से इतना निराश हो जाता कि आत्महत्या करने पर विवश हो जाता है। इंग्लैंड में मांस और शराब का प्रयोग अधिक है, अतः आत्म-हत्याएं भी अधिक होती हैं। स्काटलैंड में माँस और शराब कम है तो आत्म-हत्याएं भी कम हैं।" Dr. T.S. Clouston लिखते हैं—"माँसाहारी बच्चे प्रायः दुबले और शर्मीले होते हैं। बच्चों के लिए

सब्जी-दलिया ही सबसे अच्छा भोजन है। बुढ़ापे में माँसाहारी के अंग हिलने लगते हैं (राशा रोग)। माँस खाकर शेर की तरह पशुबल बढ़ाने से बेहतर है कि शाकाहार द्वारा हम हाथी जैसे सबसे बलवान और बुद्धिमान भी बनें। हम जो माँस खाते हैं उसमें से बुद्धि का अंश 'मगज' तो निकल जाता है। बाकी थोथा पशुबल रहता है।

प्रश्न—यूरोप-अमरीका के लोग माँस खाकर भी क्यों उन्नति कर रहे हैं?

उत्तर—उन्होंने ३-४ सौ वर्षों से ही उन्नति की। मांस तो वे पहले भी खाते थे; तब उन्नति क्यों न की? उत्तरी ध्रुव, ग्रीनलैंड, अफ्रीका, तिब्बत के लोग सबसे अधिक मांस खाते हैं, लेकिन, फिर भी सबसे अधिक पिछड़े हैं?

प्रश्न—मांस शाकाहार से सस्ता है?

उत्तर—मांस शाकाहार से एक नहीं चार गुणा महंगा साबित होता है, क्योंकि—(i) मांस से रोग होते हैं। इलाज पर भारी खर्च होता है। (ii) मांस का बाजार-भाव भी शाकाहार से सस्ता नहीं। सरकारी आंकड़े हाजिर हैं। मुकाबिला कर देखिये—

प्रति क्विंटल	१९७०	१९७३	१९७६
मछली (कलकत्ता)	६७०.८३	७५४.१६	शाकाहारी थाली
मांस (कलकत्ता)	६४१.६७	९९५.८३	=१½—२ रु०
आलू (कानपुर)	५५.३८	५७.९६	मांसाहारी थाली
घी देसी (दिल्ली)	१३२५ ६७	१७५५.६१	=५ रु०
चना (दिल्ली)	९८.७३	१७२.४२	पनीर प्लेट
दूध (००) लिटर	१२८.९०	१६४.४२	=२.५० रु०
डालडा (बम्बई)	२३.३९	२९.३५	मीट प्लेट=४ रु०

(iii) मांस खाने से इस जन्म में रोग लगते हैं। जीव-हिंसा के पाप से परलोक बिगड़ता है।

प्रश्न—मांस बड़ा स्वादु लगता है ?

उत्तर—जीभ की आदत का ही नाम स्वाद है। स्वाद मांस में नहीं, जीभ और भूख में है। शराबी को शराब, अफीमची को अफीम स्वादिष्ट लगती है लेकिन शाकाहारी को मांस देखते ही कै आती है।

प्रश्न—दुनियां की बढ़ती आबादी के लिए खेती की उपज बहुत कम पड़ती है। भूखों मरते लोग प्रतिवर्ष ४५.७ मिलियन टन समुद्री मछली न खायें तो यह कमी शाकाहार से कैसे पूरी हो ?

उत्तर—(i) विश्व-स्वास्थ्य-संगठन ने हिसाब लगाया है कि हमारी खेती की उपज का २०% भाग बेकार नष्ट हो जाता है। संरक्षण (Preservation) के वैज्ञानिक ढंग से यह हानि रोकनी चाहिये। (ii) रूस की 'सोवियत साईंस अकादमी' के समुद्र वैज्ञानिक प्रो० L. ZENKEVITCH का दावा है कि—"कृषि भूमि की अपेक्षा समुद्र की उपजाऊ शक्ति १००० गुणा अधिक है। धरती की जितनी भूमि पर ४ टन उपज होती है, उतने ही समुद्री तल पर पानी में १५ टन उपज होगी। सूर्य की ८०% धूप-शक्ति समुद्री पौधे सोखते हैं। समुद्री वनस्पति में खुश्की की वनस्पति से ४ गुणा अधिक रासायनिक तत्व हैं। सन् २००० तक दुनियां की आबादी ६ अरब होगी। केवल समुद्र में ही २९ अरब लोगों के लिये पर्याप्त शाकाहारी भोजन उगाया जा सकता है।" (iii) वैज्ञानिक लोग धरती मां के बेअंत वनस्पति, लकड़ी तथा कोयले आदि खनिजों से नये आहार बना रहे हैं। (iv) अन्तरिक्ष-विज्ञान की खोजों से यह संभव हो चुका है कि कुछेक वर्षों में ऐसी पोषक गोलियों का आविष्कार हो जायेगा कि २-४ गोलियां खाकर ही हमें सभी पोषक तत्व मिल जायेंगे।

गोलियां बेहद सस्ती होंगी Mr. LIESL GRAZ (W.H.O.)। (v) अमरीकी डाक्टर एन० बिरामोर (D.D, N.D, P.S.D; P.W.D.M.S.) ने अपनी पुस्तक 'Why suffer? Answer—Wheat Grass Manual' ने गेहूँ के पौधे का रस स्वास्थ्य के लिए उत्तम आहार सिद्ध किया है। इसी प्रकार धरती पर घास-पात, कंद-मूलों की अब भी कमी नहीं। कमी है उन पर खोज करने की। अत: मछली के बिना भी मनुष्य के लिये आहार की कोई कमी नहीं है।

अण्डा और मछली

प्रश्न—अण्डा सब्जी है या मांस ?

उत्तर—निश्चय ही अण्डा सब्जी नहीं, क्योंकि—(i) वह अन्य फल-सब्जियों की तरह पेड़, झाड़ी, बेल, खेत में नहीं उगता। (ii) अण्डा मां (मुर्गी-प्राणी) के पेट से पैदा होता है जबकि अन्य कोई सब्जी भी प्राणियों के पेट से पैदा नहीं होती। अत: अण्डा १०० % मांस है, क्योंकि —(i) वह जानदार मां बाप के बीज से, नर-मादा के सम्बन्ध से तथा मां के पेट से उसी तरह पैदा होता है जैसे दूसरे जानदार प्राणी जन्म लेते हैं। (ii) सब वैज्ञानिक मानते हैं हैं कि नर-मादा के बीज में जीवन होता है जिससे संतान को जीवन मिलता है। जब मुर्गा-मुर्गी के बीच में जीवन है और उससे बने चूजे में भी जीवन है तो उन दोनों की बीच की अवस्था अर्थात् अण्डे में जीवन न हो यह कैसे हो सकता है। यदि अण्डे में जीवन न हो तो उससे बने-पनपे चूज़े में भी जीवन न हो। (iii) अत: अण्डा उसी प्रकार जानदार है जैसे मां के गर्भ में शुरू के महीनों में मनुष्य के बच्चे का पहला रूप (भ्रूण)। (iv) अण्डा एक साबुत मुर्गा या मुर्गी है जिसकी ज़र्दी में उसके पेट-पीठ, टांगे-पंजे, आँख-नाक आदि

तथा सफेदी में पंख आदि हैं। जैसे अण्डा चूज़े का कच्चा रूप है वैसे ही उसकी जर्दी और सफेदी भी मांस का कच्चा रूप है। इसीलिये लंका के डाक्टर W. J. सूरिया ने लिखा है—"अंडा और मांस नहीं खाना चाहिये क्योंकि ये दूसरों की जान लेकर मिलते हैं।" इसीलिए एक बार जब गाँधी जी का पुत्र सख्त बीमार हुआ और बचने की आशा न रही तब डाक्टरों ने उसे अण्डा खिलाने की सलाह दी किन्तु गांधी जी इसके लिये तैयार न हुए। भारत सरकार की इण्डियन कौंसिल आफ मैडिकल रिसर्च कुनूर की 'न्यूट्रीशन रिसर्च लैबारटरी के Health Bulletin No. 23, 1956 में भी मछली-अण्डों की गिनती 'Flesh Food' (मांस से बने आहार) के अन्तर्गत की गई है। जब अण्डा मांस है तो मछली उससे भी पहले मांस है।

प्रश्न—जो अण्डा बिना मुर्गे से पैदा होता है, उससे चूज़ा नहीं निकलता। ऐसे (FAKED-EGG) को शाकाहारी (Vegetable Egg) अण्डा मानकर कई शाकाहारी लोग भी खाते हैं। क्या ऐसा अण्डा खाना चाहिये ?

उत्तर—अण्डा तो असली भी नहीं खाना चाहिये फिर नकली अण्डा तो असली अण्डे से भी अधिक बुरा है, क्योंकि—कुदरती ढंग से मादा के शरीर में आहार से चार प्रकार के पदार्थ बनते हैं—(i) रक्त-मांस-मज्जा-हड्डी-वीर्य-रज आदि ऐसे पदार्थ जो हमारे शरीर के अंग से बनते हैं और ताकत देते हैं। नकली अंडा इनमें से कुछ नहीं। (ii) संतान–नकली अण्डे से चूज़ा नहीं निकलता, अतः ऐसा अण्डा संतान भी नहीं है (iii) मलमूत्र (iv) रोग। नकली अण्डा यदि मलमूत्र का रूप है तो भी खाने योग्य नहीं और यदि वह रोग का रूप है तो भी उसे नहीं खाना चाहिये। अंडा चाहे निर्जीव भी हो तो भी उसे नहीं खाना चाहिए क्योंकि केवल निर्जीव होने से ही कोई गंदी वस्तु खाने योग्य नहीं बन जाती।

प्रश्न—फिर असली अण्डा खाने में तो कोई बुराई नहीं ?

उत्तर—असली अण्डा खाने में भी एक नहीं, दो बुराइयाँ हैं। क्योंकि कोई वस्तु खाने के योग्य है या नहीं यह जानने की तीन कसौटियां हैं–कानून, पाप और स्वास्थ्य । चाहे कानून द्वारा अण्डा खाना मना नहीं किन्तु अण्डे में जीव है और अण्डा खाने से जीव-हत्या होती है अतः पाप के विचार से अण्डा नहीं खाना चाहिये।

प्रश्न—कई डाक्टर कहते हैं कि १ अंडा १ किलो दूध के बराबर है, अतः स्वास्थ्य और कम खर्च के विचार से तो अण्डा खाना लाभदायक होगा ?

उत्तर—अण्डा दूध से सस्ता अवश्य है किन्तु दूध और अण्डे का क्या मुकाबला ? दूध अमृत है तो अण्डा स्वास्थ्य के लिए विष है। क्योंकि मुर्गी सब प्रकार के गन्दे से गन्दे पदार्थ— रोगियों के थूक, बलगम, झूठन, मलमूत्र, गले-सड़े पदार्थ कुलबुलाते नालियों के कीड़े और कीटाणु आदि खाती है। ऐसे गंदे-विषैले आहार से मुर्गी का रक्त-माँस-अंडा भी निश्चय ही गंदा-विषैला होगा।

प्रश्न—लेकिन उससे न तो मुर्गी मरती या बीमार पडती है और न ही उन्हें खाने वाले मनुष्य ?

उत्तर—(i) मनुष्य और मुर्गी-सूअर आदि के अंगों की बनावट, जरूरत और काम अलग अलग हैं। मनुष्य के लिए जो मलमूत्र, गन्द व रोगाणु हैं वे ही मुर्गी के लिऐ अनुकूल आहार हैं, क्योंकि वह बनी ही ऐसी चीजें खाने-पचाने के लिए है। ऐसे आहार से बने रासायनिक रस, रक्त, मांस, अंडे आदि मुर्गी के शरीर और स्वास्थ्य के लिए ही अनुकूल हैं, न कि मनुष्य के लिए भी। (ii) मनुष्य और मुर्गी-सूअर के रोग भी भिन्न भिन्न हैं। मुर्गी मरेगी तो मुर्गी के रोगाणुओं से ही,

न कि मनुष्य के रोगाणुओं से। अतः हमारे थूक-बलगम से उसे कोई हानि नहीं। (iii)विज्ञान का नियम है कि जो गुण-दोष आहार में हैं, वे उससे बने रक्त-मांस-अण्ड़े आदि में भी पहुंचते हैं। मलमूत्र खाने से मुर्गी के मांस-अण्डे में भी वे दोष सूक्ष्म रूप में पहुचते हैं। मांस-अण्डे का यह विष मनुष्य पर धीरे-धीरे असर करता है (Slow Pojsning)। इसीलिए आधुनिक मुर्गीखानों (Poultry Farms) में मुर्गियों को मलमूत्र से बचा कर खास तरह का मुर्गी-दाना खिलाते हैं। इससे माँस-अण्डे में विषैला असर कुछ कम पहुंचता है किन्तु पूरी तरह नष्ट नहीं होता। भारत में तो अधिकांश मुर्गियां कूड़े के ढेर पर ही पलती हैं। उन्हीं के अण्डे लोग खाते हैं।

प्रश्न—साग-सब्जी भी तो ऐसे ही गंदे खाद में उगती है ?

उत्तर—(i)वनस्पति जैसी पवित्र वस्तु तो दुनियाँ में कोई दूसरी है ही नहीं। वनस्पति विज्ञान (Biology)में पेड़-पौधे के खाने-पचाने को Osmosis कहते हैं अर्थात्–उनकी जड़ों पर नरम-नरम बाल होते हैं जो आसपास की खाद-मिट्टी से वे ही लवण और रस चूसते हैं जो किसी विशेष जाति के पौधों को जरूरत हैं। बाकि तत्वों को नहीं सोखते। अतः मिट्टी और खाद के रोगाणु जड़ों से छनकर बाहिर ही रह जाते हैं। ऐसी छलनी न तो सूअर-मुर्गी की चोंच और हाजमें में है और न मनुष्य के मुंह में। अतः गंदे से गंदे पदार्थ हमारे अन्दर पहुंच जाते है। पौधों के पत्ते हवा से पवित्र गैसें पी-पीकर न केवल स्वयं शुद्ध-पवित्र बन जाते हैं, अपितु जिस जगह वे उगते हैं वहां आसपास की हवा को भी शुद्ध-पवित्र बनाते हैं। इसीलिए मलमूत्र से बनी खाद में उग कर भी फल और सब्जी शुद्ध पवित्र रहती हैं। (ii)यह जड़ों का ही कमाल है कि वे मिट्टीमें पड़े बेजान(Inorganic) लवणों में जान फूंक कर उसे जीवन-दायक रसों (Organic) में

बदलती हैं। वास्तव में इस मुर्दा धरती पर जीवन का आरम्भ किया तो वनस्पति ने। आज भी जल-थल-आकाश के करोड़ों जीव जी रहे हैं तो वनस्पति खाकर। वनस्पति न हो तो धरती पर जीवन ही समाप्त हो जाय। जड़ें, तने और पत्ते वनस्पति पर एक से एक सुन्दर रंग बिखेरते हैं, जिन्हें देखकर आँखें तृप्त होती हैं और उदास से उदास मनुष्य का भी मन खिल उठता हैं। उसकी रंग-बिरंगी सुगन्धि से सारा शरीर महक उठता है। किस्म-किस्म के स्वाद से तन-मन तृप्त होता है। इस प्रकार कहाँ तो वनस्पति की बराबर ताजगी, रंग, रूप और षट्रस स्वाद ? कहाँ बदबू-सड़ांद-बासीपन से भरा माँस-अण्डा ? इसीलिए संसार के १००% डाक्टरों की राय में —*'पशु-प्रोटीन और पशु चर्बी* (Animal Protien & fat) *से वनस्पति से प्राप्त प्रोटीन और चर्बी हमारे हाजमे और स्वास्थ्य के लिए श्रेष्ठ है।"* क्योंकि मांस में जो थोड़े बहुत गुण, स्वाद और प्रोटीन-चर्बी आदि हैं उन्हें भी सब पशु-पक्षी वनस्पति खाकर ही लेते हैं। जो तत्व और गुण वनस्पति में नहीं, वे माँस में भी कभी नहीं हो सकते। फिर आप ही सोचिये कि सब ताकतों, तत्वों और गुणों की जड़— वनस्पति खाकर First hand तत्व लेना हमारे शरीर-स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है या पशुओं के मांस-अण्डे में से आधो-अधूरी 'सैकिण्ड हैंण्ड' चर्बी-प्रोटीन खाकर ? जब मुर्गी–बत्तखें आदि सब पशु-पक्षी भी वनस्पति से ही अपने शरीर के लिए उपयोगी तत्व लेते हैं, फिर हम भी क्यों न सीधा वनस्पति से प्रोटीन आदि लें ? असली को छोड़ कर नकली के पीछे भागना सयानों का काम नहीं।

प्रश्न—कई डाक्टरों का कहना है कि अण्डा जल्दी हजम होता है और शरीर को जल्दी ताकत देता है ?

उत्तर—साथ ही डाक्टरों का यह भी कहना है कि —

(क) 'सहज पके सो मीठा होय।' स्वास्थ्य-विज्ञान के अनुसार भोजन के दो परिणाम (Laregh Duel Effects) हैं– झटपट नतीजा (Immediate Effect) और टिकाऊ नतीजा (Altimate Effect)। यह ठीक है कि अण्डे की जर्दी के कुछ तत्व जल्दी हज़महोते हैं, पर साथ ही वे हमारे रक्त, हृदय, गुर्दे और मसाने में झटपट गर्मी का ऐसा उफान भी लाते हैं, जिससे चंचलता, मस्ती, और कामुकता (Sexual Excitement) भड़कती है। जितनी तेजी से ऊर्जा की बाढ़ सी हमारे शरीर में आती है, उतनी ही तेजी से वह विषय भोग आदि द्वारा बाहिर निकलने को भी मचलती है। भड़कती कामुकता को तो ऋषि मुनि भी नहीं रोक सकते, फिर भला कमजोरियों का पुतला साधारण मनुष्य उत्तेजना से अंधा होकर गलत कार्यों और घटिया आदतों का शिकार कैसे न हो? अण्डे के द्वारा मुर्गी के जो गुण, कर्म और स्वभाव चूज़े में पहुँचने थे वे अब मनुष्य में पहुंच जाते हैं। या यूँ समझिये कि मांसाहारी मनुष्य में चूज़ा घुल-मिल जाता है, फिर वह मुर्गी-सा कामुक क्यों न हो?

(ख) डाक्टरों का यह भी कहना है कि—"अण्डे भी हानिकारक हैं। आप कह सकते हैं कि अण्डों से मेरे स्वास्थ्य को कोई हानि नहीं होती किन्तु अण्डों का रसायनिक विश्लेषण करने से इससे उल्टी ही बात सिद्ध होती है। अण्डे की ज़र्दी में कौलस्टरोल नाम का चिकना मादक रस (अल्कोहल) होता है। यह जिगर में जमा होते-२ खून की नस-नाड़ियों में जख्म और तनाव पैदा कर देता है।" (D. J. Aman Wilkins, इंग्लैंड)। OCANO, केलिफोर्निया की डा० Ketherine Nimmo D.C.R.N. का दावा है कि—"अण्डों में कौलस्टरोल की मात्रा इतनी अधिक है कि उनके प्रयोग से रक्त की नाड़ियों, हृदय, गुर्दों और पित्ताशय में ब्लड-प्रैशर, पथरी आदि रोग पैदा हो जाते हैं।" इंग्लैंड के डा० Robert Gross का कहना है

कि—',एक अण्डे में लगभग ४ ग्रेन कोलेस्टरोल होता है। अण्डे खाने से रक्त में कोलेस्टरोल बढ़ जाता है, जिससे पित्ताशय में पथरी आदि रोग पैदा होते हैं।"

(ग) डाक्टर Robert Gross का यह भी कहना है कि—
"अण्डे की सफेदी उसका सबसे अधिक खतरनाक हिस्सा है। जिन पशुओं को अण्डे की कच्ची सफेदी खिलाई गई, उन्हें खाल में तेज जलन और लकवा हो गये।" क्योंकि इस सफेदी में पेचीदा प्रोटीन होती है, जिससे मुर्गी की टाँगें-पंख आदि बनते हैं। इस कच्ची प्रोटीन को भी हर-एक मेदा हज़म नहीं कर सकता फिर भारत के लोग तो उसे खौलते दूध में फेंटकर, भूनकर, उबालकर, तलकर' आमलेट-पेस्ट्री में खूब तेज आंच पर पका-पका कर खाते हैं, जिससे वह भारी से भारी होता जाता है। Dr. Mecollum, Dr. R. J. विलियम आदि दुनियां के प्रसिद्ध डाक्टरों के मत में—"अण्डे की सफेदी के साथ पित्त और पाचक रस दोनों ही नहीं घुलते जिससे अण्डे की सफेदी का ३०% से ५०% भाग पच नहीं पाता।" "अण्डे की सफेदी के एवीडिन तत्व से एग्जिमा (खुजली) होता है।"
"अण्डै में चूने की मात्रा बहुत कम तथा कार्बोहायड्रेट बिल्कुल न होने से वे बड़ी आंतों में जाकर जठराग्नि को बढ़ाने की बजाय वहां सड़ाँद पैदा करते हैं।" "अण्डों में नाइट्रोजन, फासफोरिक एसिड और चर्बी अधिक मात्रा में होने से वे शरीर में तेजाबी रस बढ़ाकर रोग उत्पन्न करते हैं।"

वास्तव में अण्डा खाने की आदत पुरानी नहीं। राक्षस, दस्यु और कुछ जंगली लोग पहले भी मांस तो खाते थे पर अण्डा नहीं। इस विषय में प्रसिद्ध लेखक ग्वेन शूल्त्स ने बड़ी खोज के बाद निर्णय दिया है कि—"मुर्गी-पालन सबसे पहले दक्षिण-पूर्व एशिया में शुरू हुआ था परन्तु तब भी उनके वहां मांस और अण्डे नहीं खाये जाते थे। अफीका में अब भी यही होता है। वहां लोग घरों में मुर्गियां पालते हैं, लेकिन—पंखों के लिये

या उन्हें बलि चढ़ाने के लिये या धार्मिक उत्सवों के लिये। वे भोजन के लिये उनका प्रयोग कभी नहीं करते। कुछ लोग तो अण्डों को मुर्गियों की विष्ठा समझते हैं और अण्डा खाने वाले बाहरी लोगों से घृणा करते हैं। वहां कहा जाता है कि यदि गर्भवती माँ अण्डा खाये तो बच्चा बौना या टेढ़ा-मेढ़ा होगा और आगे चल कर चोर बनेगा। उनका बिचार है कि अण्डे खाने से स्त्री आपे में नहीं रहेगी और घर से भाग जाएगी। इसी प्रकार दुनियां की कई जातियां मछलियों को भी गंदा समझती हैं, उन्हें खाने से महारोग लग जाते हैं। अफ्रीका में यदि नौकर को मछली पकाने के लिये कहा जाए तो वह इन्कार कर देगा, चाहे नौकरी ही क्यों न चली जाये।"

शाकाहारिता (VEGETARIANISM) के आनन्द

१. शाक बोने-उगाने में आनन्द ! देखने-सूंघने में आनन्द ! चढ़ाने-पकाने में आनन्द ! खाने-पचाने में आनन्द ! रोग और मल निकासी में आनन्द ! शाकाहार में शुरू से लेकर अंत तक आनन्द ही आनन्द है।

२. एक टन माँस पैदा करने के लिए जितना स्थान चाहिये उतने में १० से २० टन अधिक साग-सब्जी पैदा हो सकती है।

३. माँसाहार से शाकाहार सस्ता है। १९७६ से रेलों में शाकाहारी 'जनता भोजन' की थाली केवल ६० पैसे में है जब कि मांसाहारी भोजन इससे कहीं अधिक महंगा है। माँस-अण्डे से कीमत में दस गुणा सस्ता और गुणों में मांस से दुगुना व अंडे से तिगुना अच्छा सोयाबीन का भोजन है। सोयाबीन में उच्च गुणों वाला प्रोटीन ४०% है जबकि मांस में २०% और अंडे में १४% है। सोयाबीन में २०% वसा, ३०% कार्बोहा० तथा कै० विटामिन लोहा व अन्य विटामिन भी अधिक हैं।

४. शाकाहार में रोग का खतरा नहीं, बल्कि इससे तो पुराने से पुराने रोग भी ठीक होते हैं। क्योंकि यह मल को निकालता है। इसमें शरीर के विकास, बढ़ोतरी, टूट-फूट की मुरम्मत, तापमान को स्थिर रखने तथा कार्यशक्ति को बढ़ाने के गुण हैं। ये पेट में पाचक रस भी बनाता है। अतः यह आहार का आहार है, दवाई की दवाई। एक पंथ दो काज।

५. इसमें ताज़गी, ऊर्जा और विटामिन काफी समय तक बने रहते हैं। सूखने पर कुछ तत्व कम होते हैं तो धूप से सूखे फल-सब्जी में कुछ नये गुण भी बढ़ जाते हैं। नया नौ दिन, पुराना सौ दिन।

६. सागसब्जी की बागवानी से दिल में कोमलता, हृदय में सौन्दर्य, मन में शाँति और जीव-मात्र के लिये प्रेम उत्पन्न होता है। मांसाहारियों के खूनी और खूंखार स्वभाव से मुक्ति मिलती है। शाकाहारी का मस्तिष्क ठंडा और शांत होता है, जिसमें प्रेम, दया, सेवा और हमदर्दी जैसे ऊंचे विचार हिलोरे लेते हैं।

७. शाकाहारी माताएँ सन्तान-उत्पत्ति की परीक्षा में सरलता से उत्तीर्ण हो जाती हैं। माता के शुद्ध दूध और शुद्ध रक्त से शिशु में भी शुद्ध रक्त का संचार होता है, जिससे शिशु की रोग-निरोधक शक्ति बढ़ जाती है और वह जन्मते ही रोगों का शिकार नहीं होता।

८. शाकाहारी लोग स्वभाव से अधिक धार्मिक, शांत, दयालु, कम-खर्च और मेहनती होते हैं। वे प्रायः शराब और सिगरेट भी नहीं पीते, अतः फिजूलखर्ची, लड़ाई-झगड़े, घर-बरबादी से भी बचे रहते हैं। ऐसे माता-पिता की संतान भी अधिक सुधरी हुई और गुणवान बनती है।

९. विश्व के महान् विचारक, सुधारक और तत्त्ववेत्ता शाकाहारी रहे हैं। सभी धर्मों ने भी अहिंसा पर बल दिया है। पैथागोरिस, प्लैटो, सुकरात, टालस्टाय, बाल्टेयर तथा ईसाई धर्म के अनुयायी टर्टलियन, किल्मेण्ट, न्यूटन, मिल्टन, पिटमैन, बर्नार्डशा आदि भी शुद्ध शाकाहारी थे। एक बार बर्नार्ड को डाक्टरों ने कह दिया – 'गोमाँस खाओ तो तुम बच सकोगे; नहीं तो मर जाओगे।'' बर्नार्डशा ने कहा– ''मुझे तजुर्बा कर लेने दो। यदि मैं न मरा तो तुम्हें माँसाहार छोड़ना पड़ेगा''। बर्नार्ड शा ने अपनी वसीयत में लिखा–''*यदि मैं मर गया तो मेरी अर्थी के साथ रोते हुए लोगों से भरी गाड़ियों की जरूरत नहीं। मेरे साथ बैल, भेंड़ें, मुर्गे और मछलियां होंगी, क्योंकि मैंने साथी प्राणियों को खाने के बदले मरना अच्छा समझा है।*''

१०. वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि संसार के सबसे अधिक स्वस्थ और लंबी आयु वाले लोग मध्य एशिया में रहने वाली हुंजा जाति के लोग हैं जो शुद्ध शाकाहारी हैं। बम्बई के प्रसिद्ध पहलवान श्री सुधाकर भीम से लोगों ने पूछा— ''*आपके सुन्दर स्वास्थ्य और अभूत-पूर्व शक्ति का रहस्य क्या है?*'' *भीम ने कहा— ''शरीर के स्वास्थ्य और दीर्घायु के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण फल और हरी सब्जियां हैं। बंदर, हाथी, गैंडा और जंगली सूअर आदि केवल शाकाहार द्वारा ही अपार शक्ति और स्फूर्ति प्राप्त करते हैं। मनुष्य में भी किसी समय पशुओं जैसी शक्ति थी। तब मनुष्य शाकाहारी और संयमी था। लेकिन आज अनावश्यक खान-पान और व्यायाम के बिना वह शरीर से कमजोर और अल्प आयु वाला प्राणी बन गया है।*''

—०००—

शास्त्रों की राय में—क्या मांस खाना उचित है ?

प्रश्न—कई भारतीय और पश्चिमी विद्वानों की राय में वेदों में लिखा है कि—(क) अश्वमेध, गोमेध और अजमेध यज्ञों में क्रमशः घोड़े, गाय तथा बकरे की बलि चढ़ाना और (ख) मांस खाना—दोनों उचित हैं ?

उत्तर—ये उन अनाड़ी पण्डितों की बातें हैं जो न वेद जानते हैं न उनके अर्थ। 'नीम हकीम' के हाथों में पड़ कर जैसे 'खतरा जान' होता है वैसे ही अधूरे पण्डितों के हाथों में पड़ कर अर्थ का अनर्थ क्यों न हो ? इसीलिए नवम्बर १९७६ में विश्व-वैदिक परिषद् और चौधरी प्रतापसिंह ट्रस्ट की ओर से वेदों के प्रसिद्ध ५० विद्वानों की वेद-गोष्ठी हुई। ये विद्वान् वेदों के पूर्ण पण्डित और विशेषज्ञ (Specialist) थे तथा भारत के कोने-कोने से चल कर हरिद्वार में इकट्ठे हुए थे। पाँच दिनों तक उन्होंने 'वेद और मांस' विषय पर कही गई अनाड़ी पण्डितों की बातों पर चर्चा करके निर्णय दिया कि— (क) *वेदों में न तो यज्ञ में पशु-बलि देने की बात कहीं लिखी है और न मांस खाने को ही उचित बताया गया है। (ख) भारत और पश्चिमी देशों के कुछ विद्वानों ने 'गोमेध', 'अश्वमेध', और 'अजमेध' शब्दों का गलत अर्थ किया है। विश्व वेद-परिषद् के अध्यक्ष स्वामी धर्मानन्द विद्यामार्त्तण्ड ने कहा— 'गोमेध का अर्थ यह नहीं कि यज्ञ में गाय की बलि चढ़ाई जाये, बल्कि इसका असली अर्थ है कि वाणी को व्याकरण आदि शास्त्रों द्वारा पवित्र करना चाहिये।" आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री ने सिद्ध किया कि— "वेद में अश्वमेध का अर्थ यह नहीं कि यज्ञ में घोड़े की बलि दी जाये, प्रत्युत इसका अर्थ है कि आत्मा को परमात्मा के प्रति समर्पण किया जाय ताकि जीवन और राष्ट्र शक्तिशाली बनें। (ग) इसी प्रकार 'अजमेध' का अर्थ यज्ञ में बकरे की बलि देना नहीं, क्योंकि अहिंसा तो वैदिक यज्ञों की सबसे पहली विशेषता रही है।* फिर यह कैसे संभव है कि वेद एक सांस में अहिंसा की बात

कहे और दूसरे ही सांस में हिंसा को खुली छुट्टी दे दे; वह भी यज्ञ जैसे पवित्र काम में ? अतः लोगों का यह कहना गलत है कि वेदों और ब्राह्मण ग्रंथों में हिंसा-भरे यज्ञों का वर्णन है। यह कहना भी सरासर गलत है कि वैदिक काल में माँसाहार और शराब पीने का प्रचार था।

प्रश्न—वेद के ठीक या गलत अर्थ की कसौटी क्या है ?

उत्तर—उसकी मुख्य कसौटियाँ हैं।

(१) वेद का अर्थ वेद से—वेद में अधिक जगह जो बात कही जाती है दूसरी जगह उसी को स्पष्ट करके बताया जाये तो वेद से वेद का अर्थ पक्का हो जाता है। एक जगह 'हां' हो तो दूसरी जगह 'न' कैसे हो सकती है ? यदि एक ही विषय पर आपस में विरोधी बातें दिखाई दें, तो समझ लें कि दोनों में से एक अर्थ गलत है। जैसे वेद में बारबार कहा गया है—*"मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्"* *अर्थात् हर एक प्राणी को अपना मित्र समझो और उससे प्रेम करो।* किसी का दिल तक न दुखाओ। जो वेद प्रेम और अहिंसा का इतना जोरदार समर्थन करता है, वही यज्ञ में पशुबलि देने या पशु-माँस खाने की अनुमति कैसे दे सकता है ? अतः जहां-कहीं हमें मांसाहार का समर्थन दिखाई दे, उसे अर्थ करने वाले अनाड़ी पंडितों की भूल ही समझना चाहिये।

(२) **वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत में अंतर**—वेदों की संस्कृत और साहित्य की संस्कृत में कुछ नियम एक जैसे हैं तो कुछ-एक दूसरे से भिन्न भी हैं। अतः आवश्यक नहीं कि लौकिक संस्कृत में शब्द का जो अर्थ हो, वही अर्थ वेद में निकाला जाये। कुछ शब्दों के वेदार्थ लोक-साहित्य में प्रसिद्ध अर्थ से बिलकुल भिन्न होते हैं। जैसे लोक में 'गौ' का अर्थ केवल 'गाय' है। किन्तु वेद में 'गौ' के

Scanned with CamScanner

अनगिनत अर्थ हैं; जैसे पृथ्वी, गाय, वाणी, किरणें, जल, धनुष की डोरी, चमड़े का बर्तन, घी–दूध–दही आदि।

(३) **छः वेदांगों द्वारा वेदार्थ की जानकारी**—वेद के अर्थ का निर्णय करने के लिये छः वेदाँग सबसे मुख्य साधन हैं—व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, कल्प और शिक्षा।

(क) **व्याकरण**– व्याकरण के कुछ नियम वेद और लोक-साहित्य की संस्कृत के लिये समान है। किन्तु व्याकरण के आचार्य पाणिनि ने वेद के लिए विशेष नियम भी लिखे हैं जो केवल वेद पर ही लागू होते हैं। अतः यह आवश्यक नहीं कि जो मनुष्य लौकिक संस्कृत का पण्डित है, वेद का भी पण्डित हो। वेद का अर्थ जानने के लिये वेद का पण्डित होना आवश्यक है। जो वैदिक व्याकरण नहीं जानता, वह वेद के अर्थ का अनर्थ भी कर सकता है; जैसे गौमेध का अर्थ 'श्रेष्ठ वाणी' न समझकर कुछ लोग उसका मतलब लेते हैं—'यज्ञ में गाय की बलि देना।'

(ख) **निरुक्त**—निरुक्त को वैदिक शब्दकोष या (Dictionery) ही समझना चाहिये। यह बताता है कि वेद में कहां, किस शब्द का क्या अर्थ है और क्यों ? यदि हम लौकिक संस्कृत का कोष देखकर वेदमंत्रों का अर्थ निकालने लगें तो यह वैसा ही काम होगा जैसे फारसी बोलते हुए 'दस्त' शब्द का अर्थ उर्दू के कोष में देखें क्योंकि फारसी में दस्त का अर्थ है 'हाथ' जबकि उर्दू में दस्त का अर्थ है 'पतली टट्टी'।

व्याकरण हमें वैदिक स्वरों का भी ज्ञान कराता है। वैदिक मन्त्रों में स्वरों (Accent) की जानकारी बेहद जरूरी है, क्योंकि स्वर बदलते ही वेद का अर्थ भी प्रायः बदल जाता है।

उदाहरण के लिये व्याकरण के दूसरे आचार्य पतञ्जलि ऋषि ने 'महाभाष्य में लिखा है—'मंत्रः हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह । स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ।' अर्थात् वेदमंत्रों में स्वर या अक्षर का गलत प्रयोग करने से उसका अर्थ भी गलत हो जाता है ।

लौकिक संस्कृत में स्वर को जानकारी को कोई विशेष आवश्यकता नहीं । अतः केवल लौकिक संस्कृत का पण्डित यदि वेद का अर्थ करने लगे तो निश्चय ही अर्थ का अनर्थ कर देगा क्योंकि, वेद में तो स्वर-ज्ञान के बिना काम ही नहीं चलता ।

(ग) **छन्द** (Metre)—वेद-मंत्र छन्दों में लिखे गये हैं। छन्दों के ज्ञान से वेद-मन्त्रों को पढ़ने को शुद्ध विधि में सहायता मिलती है । साथ ही विशेष-विशेष छन्द विशेष-विशेष देवताओं (मंत्र के विषयों) का भी बोध कराते हैं । अतः छन्द - ज्ञान भी आवश्यक है ।

(घ) **ज्योतिष**—वैदिक ज्योतिष १००% गणित पर आधारित है। अतः वेद का ठीक-ठीक अर्थ जानने के लिये गणित-ज्योतिष की वैज्ञानिक जानकारी आवश्यक है ।

(ङ) **कल्प** – विज्ञान का प्रैक्टिकल करना जैसे जरूरी है, वैसे ही कल्प को वेद का प्रैक्टिकल या प्रयोग-शास्त्र समझना चाहिये। जो बात वेदमंत्रों में बताई गई है उसका प्रयोग कब कहां, कैसे किया जाता है यह बताना कल्प का काम है। जैसे यज्ञ-वेदी कैसे बनाई जाती है आदि । जिसने न कभी यज्ञ किया और न देखा, भला वह वेद मंत्रों का अर्थ कैसे कर सकेगा ? सुनते हैं कि एक लालबुझक्कड़ ने हाथी कभी न देखा था। अतः धरती पर उसके पैरों के निशान देखकर उसने कहा—

"पग में चक्की बांधकर हिरणा कूदा होय।" अर्थात् अपने पैर में चक्की बांध कर हिरण कूदता रहा है, उसी के निशान हैं।" यदि उसने हाथी देखा होता तो वह गलत अनुमान न लगाता। अतएव वेद का शुद्ध अर्थ जानने के लिये कल्प का ज्ञान जरूरी है।

(च) शिक्षा द्वारा वर्णों के शुद्ध उचारण आदि का बोध कराया जाता है। इसका भी ज्ञान होना परम आवश्यक है।

४. **देवता और ऋषि** (Reference & Context) वेद के प्रत्येक मंत्र का देवता और ऋषि अलग हैं। देवता से मंत्र के विषय का पता चलता है और ऋषि से द्रष्टा का। ये एक तरह से प्रसंग बताते हैं। वाणी के प्रसंग में 'गौ' का अर्थ वाणी होगा, पृथ्वी के प्रसंग में 'पृथ्वी' और सूर्य के प्रसंग में 'किरण'। अनाड़ी पण्डित प्रसंग को देखे-समझे बिना अर्थ का अनर्थ कर सकता है।

५. **शब्द-शक्ति** —शब्द की तीन शक्तियाँ होती है, जिनसे ठीक अर्थ का पता चलता है—(i) शब्द की शक्ति अभिधा (Denotation) से शब्द का मूल (साधारण) अर्थ का पता चलता है, जो कोष में प्रसिद्ध है। जैसे 'गधा' एक पशु (गधा) अभिधा शक्ति से। (ii) **शब्द की लक्षणा शक्ति** (Connotation) :—लक्षण का अर्थ है—निशानी या गुण। लक्षणा शक्ति से विशेष प्रसंग (Reference) में विशेष अर्थ निकलता है, जैसे बिना समझे काम करने वाले मनुष्य को 'गधा' कहें तो इस शब्द का अर्थ 'मूर्ख' होगा न कि कुम्हार का पशु। (iii) **शब्द की व्यंजना शक्ति** (Irony या Satire) :—कहने वाला मनुष्य जिस भाव से शब्दों का प्रयोग करता है, उसी के अनुसार उस शब्द का अर्थ समझना चाहिए। जैसे 'सूर्य डूब गया' इस एक ही वाक्य के अलग-अलग अनगिनत अर्थ निकल सकते हैं। जैसे दिहाड़ी

का मजदूर अपने मालिक को यह कहे तो "छुट्टी का समय हो गया है।" चोर, चोर को कहे तो "चारी करने का समय हो गया।" इस प्रकार ये तीन शब्द शक्तियां बताती हैं कि किसी भी शब्द का हर जगह एक ही अर्थ निश्चित नहीं होता। अनगिनत मौकों पर एक ही शब्द के अनगिनत अर्थ निकलते हैं। जसे 'कर' शब्द के कई अर्थ हैं— तू कर (Do), आयकर (Tax), कर-कमल (Hand)। यदि इन्कम टैक्स के दफ्तर में हम 'कर' का मतलब 'हाथ' समझ तो यह भूल है।

६. **वेद काव्य या कविता** (Poety) है:—"काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति। महिव्रत: शुचिबंधु: पावक: पदा वराहा अभ्येति रेभन्। पू० अ० ५, व ६ मत्र २।' अर्थात् ईश्वर उत्तम शब्दों का प्रयोग करके वेद रूपी कविता गाता है।" इस प्रकार वेद कविता है और कविता में सीधी-सादी भाषा न होकर उसमें छन्द, अलंकार, रस, संवाद आदि (Ornamental Speeches) का प्रयोग होता है। ये अलंकार क्या है? शब्दों और अर्थो के चमत्कार (कमाल) को अलंकार कहते हैं। कवि के इस कमाल को समझने और उसका आनन्द लूटने के लिये पढ़ने वालों में कमाल का दिमाग एवं ऊंचे दर्जे की बुद्धि चाहिये; नहीं तो अर्थ का अनर्थ हो जाएगा।

७. **वेद में श्रद्धा:**—'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्'। अर्थात् जिसमें श्रद्धा हो वही ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

८. **वेद का स्वाध्याय** :—केवल एक-दो दिन या एक-दो मंत्र पढ़-सुन कर कोई भी वेद के अर्थ की गहराई को नहीं पा सकता जब तक कि वह निरन्तर वेद का स्वाध्याय (Study), मनन (Meditation), निदिध्यासन (Practice) न करे और योगाभ्यास द्वारा उसे अपने जीवन में अपना न ले।

पीछे लिखी इन ८ योग्यताओं वाला पाठक (Reader) ही वेद का शुद्ध अर्थ समझ सकता है। अधूरे, अनाड़ी, नीमहकीम पण्डित जैसे आज हैं वैसे पहले भी रहे होंगे और वेद मंत्रों के उल्टे-सीधे अर्थ कर देते होंगे। इसीलिये एक बार—

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम। गोपाय माशेवधिष्टेऽहमस्मि।
असूयकाया-वृजवेऽयताय, न मा ब्रूया: वीर्यवती तथा स्याम्।"

अर्थात् विद्या बेहद घबराई हुई विद्वानों की शरण में पहुँची और दूर से ही चिलाई-"बचाओ, बचाओ! मुझे इन धूर्त पंडितों से बचाओ! हे विद्वानों, यदि तुम मेरा भला चाहते हो और सचमुच चाहते हो कि मैं फलती-फूलती रहूं तो मेहरबानी करके भूलकर भी मुझे ऐसे लोगों के हवाले न करना जो नीयत के खोटे, दिल के ईर्ष्यालु और ऐसे कृतघ्न हों कि अपने विद्या-गुरुओं का भी तन-मन-धन से आदर करना नहीं जानते। ऐसे कृपाणों के पास मैं भूलकर भी जाना नहीं चाहती। इसलिये हे विद्वानो, तुम्हें मेरी सौगंध। तुम मुझे देना तो ऐसे योग्य शिष्यों को, जो अक्ल के धनी, दिल दिमाग के साफ, और सच्चे ब्रह्मचारी हों और तुम से जलते न हों।

ऐसे ही कुछ भारतीय और पश्चिमी पंडितों ने वेद के अर्थों की हड्डी-पसली तोड़कर दिखा दी, क्योंकि न तो उनमें वेद पढ़ने की श्रद्धा थी और न ही उनका शुद्ध अर्थ समझने की ८ योग्यताएं। अत: उन्होंने वेद-मंत्रों के उलटे अर्थ लगाकर यह सिद्ध करने का व्यर्थ यत्न किया कि– वेद की राय में माँस खाना उचित है।

प्रश्न—अब तक हम भी यही समझते रहे हैं कि वेद में माँस खाने की पूरी छूट है क्योंकि पंडित लोग इसके प्रमाण के रूप में ऋग्वेद का यह मंत्र सुनाते हैं—

उक्षणोहि मे पञ्चदश साकं पचन्ति विंशतिम् । उताहमद्मि पीव इदुभा कुक्षी पृणन्ति मे विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः। ऋ० १०/८६/१४ इसका अर्थ वे यह बताते है—"इन्द्र कहता है—

इन्द्राणी की प्रेरणा से पुरोहित लोग यज्ञ में मेरे लिए १५-२० बैल मार कर पकाते हैं जिन्हे खाकर मैं मोटा-ताजा बनता हूँ। वे मुझे भरपेट सोमरस भी पिलाते हैं।" क्या यह गलत है ?

उत्तर—यह अर्थ नहीं, अनर्थ (Blunder / Injustice) है।

फिर इसका शुद्ध अर्थ क्या है ? क्यों है ? प्रमाण प्रस्तुत है—

१. **व्याकरण**—उक्षन् शब्द व्याकरण की 'उक्ष सेचने' धातु से बना है जिसका अर्थ है 'सींचना'। अतः उक्षन् शब्द का मुख्य अर्थ है--सींचने वाला ।

२. **शब्द-शक्ति**—शब्द-शक्तियों से उक्षन् का अर्थ है—(i) मौसम विज्ञान में=समुद्र या बादल। (ii) औषधि-विज्ञान में=सोमरस। (iii) अध्यात्म-विज्ञान में=सहस्रार चक्र, जहां से अमृत टपकता है। (iv) शरीर विज्ञान में=प्राण। (v) ज्योतिष में-वृषराशि। जीव-विज्ञान में=बैल। जब उक्षन् के अन्य अथ भी प्रसिद्ध है केवल बैल ही अर्थ क्यों किया जाये ? अन्य क्यों नहीं ?

३. **वेद द्वारा वेद का अर्थ**—वेद में जगह-जगह कहा है—"यजमानस्य पशून् पाहि (यजुवेद १।१)। शन्नोऽस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे (यजुर्वेद ३६।८)। "द्विपादव चतुष्पात् पाहि" अर्थात् पशुओं की रक्षा करो। ऋग्वेद के १।३७।५ और १।१६४।२७ तथा १०।२७।१६ आदि मंत्रों में बार-बार लिखा है–गाय की हत्या कभी मत करो।

४. **कल्प और परंपरा के विरुद्ध**—होने से उक्षन् का 'बैल' अर्थ वेद के विरुद्ध है। यज्ञवेदी पर पशुओं की हत्या करने की किसी भी वैदिक शास्त्र ने आज्ञा नहीं दी। हिन्दू-संस्कृति में और विशेष रूप से वैदिक धर्म में गाय को इतना पवित्र और पूज्य पशु माना गया है कि उसकी सेवा स्वर्ग सुख के समान समझी जाती है, उसकी कृपा नरक से पार करने वाली है, गौ का दूध-घी अमृत के समान हैं। गाय का गोबर और गोमूत्र परम औषधि है। यज्ञ की सफलता भी गोदान से है और जीवन की सफलता भी गोदान से। इस पर भी गाय मांस खाने का अपराधी भी किसी छोटे-मोटे आदमी को नहीं बनाया जा रहा, बल्कि देवों के देव, स्वर्ग के राजा इन्द्र को ?

निश्चय ही यह अर्थ का अनर्थ है ! बे-मेल जोड़-तोड़ है ! भयंकर विरोध (Contrast) है और वेद-मंत्र का १००% गलत अर्थ है क्योंकि—

५. **१५-२० बैल खाना-पचाना असंभव**=दुनियाँ की सब से बड़ी और पेटू ह्वेल-शार्क मछलियां भी १५-२० बैल एक साथ खा-पचा नहीं सकतीं ? फिर बेचारे अकेले इन्द्र की क्या बिसात ? वह शेर-चीता भी तो नहीं कि केवल मांस से ही पेट भरता हो ? साथ षड्रस भोजन भी तो चाहिये ? इतना बड़ा पेट न किसी का हुआ है और न होगा। अतः यह असम्भव (Inconceivable) अर्थ है।

इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि यहाँ 'उक्षणो' शब्द का अर्थ 'बैल' नहीं, प्रत्युत 'बल बढ़ाने वाले पदार्थ है। "इसी प्रकार 'इदि एश्वर्ये' धातु से बने 'इन्द्र' शब्द का अर्थ 'ईश्वर' है। पूरे मंत्र का अर्थ इस प्रकार है :--

विश्वस्माद=सारी दुनियां से, उत्तरः=बढ़-चढ़कर है। उसी इन्द्र की शक्तियाँ, मे=मेरे लिए, पंचदश-विंशतिम्=१५-२० या बहुत से, उक्षणः=बलवर्धक पदार्थ, साकं=साथ-साथ, पचन्ति=पकाती, तैयार करती हैं। अहं=मैं उन्हें, अद्भि=खाता हूँ तो उनसे मे=मेरी, उभौ कुक्षी=दोनों कोखें, पृणन्ति=तृप्त हो जाती है (मैं भरपेट खाता हूं), उत=फिर, पीव=मैं मोटा ताजा बनता हूं।

इसी प्रकार वेद आदि शास्त्रों के मंत्रों में विशेष शब्दों के अनर्थ और अर्थ इस प्रकार हैं:—

शास्त्र	मंत्र	शब्द या वाक्यांश (Phrase)	अनर्थ (Misinterpretation)	अर्थ (True Interpretation)
ऋग्वेद५/२९/७	सख्या सख्ये अपचत्त यमग्निरस्य क्रत्वा महिषा त्री शतानि	महिषा (त्री शतानि अपचत्)	३०० भैंसे पकाये	निरुक्त के अनुसार महिषा=महान
यजुर्वेद २१/४३	होता यक्षदश्विनो छागस्य हविष आत्तामद्य मध्यतो	छागस्य मध्य मेदः आत्ताम्	बकरे की चर्बी खाओ	मध्यतः मेदः=घी दूध से निकली fat
ऋग्वेद १/६१/१२	अस्माइदु·· गोर्न पर्व विरदा तिरश्चेत	गोर्न पर्व	जैसे कसाई गौ को काटता है	गो=वाणी या भाषा के विभाग की तरह। निरुक्त अध्याय ४ पाद १, खंड ३, मांसमानन मानसंवा मनभाताभात
वृहदारण्यक उपनिषद् ६/४/१८	अथयइच्छेत पुत्रो मे पण्डितो···मांसौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्यीयात्	(क) मांँसौदनं मश्यीयात (ख) औक्ष वार्षभेण	मांँस का पुलाव खायें सांड या बैल का मांस	अमर कोष व राज—निघण्टु/१५०के अनुसार वृषभी=एक जड़ी-बूटी
अथर्ववेद ६/७०/१	यथा मांसं यथा सुरा यथाक्षा अधिदेवने।	यथा मांँस	जैसे मांस से दिल खुश होता है	यह निषिद्ध बातों का प्रकरण है। अतः मांसाहार को बुरा बताया है

इस प्रकार केवल 'मांस' शब्द को देखकर ही वेद में मांसाहार का वर्णन समझना अनाड़ीपन है। वेद-मन्त्रों की गहराई तक या तो योगी पहुँच सकता है या वेदिक गुरु से पढ़ा हुआ शिष्य।

प्रश्न—पण्डितों ने वेदों के अर्थ का तो अनर्थ किया किंतु मनुस्मृति, महाभारत, रामायण तो लौकिक संस्कृत में हैं। उनमें तो स्पष्ट लिखा है :—

(क) यज्ञ के लिए और नौकरों के लिए ब्राह्मण लोग बढ़िया-बढ़िया पशु-पक्षी मारें। अगस्त्य ऋषि भी ऐसा करते थे। (मनुस्मृ० अ० ५ श्लोक २२, २३ तथा २६ से ४२ तक)

(ख) मरता क्या न करता ? ऋषि विश्वामित्र ने अपनी जान बचाने के लिए चाण्डाल के घर कुत्ते का मांस तक खाया, (महाभारत शांतिपर्व)

(ग) राम मृगों का शिकार करके सीता के लिए मांस लाते थे। (रामायण/ अरण्यकांड)। भरत ने राम के सामने माँस वाली मिठाइयां परोसीं [वा० रामा० उत्तर काण्ड]।

उत्तर—(क) वैदिक संस्कृत का समझना जहां अनाड़ियों के लिए कठिन है वहीं उसमें मिलावट करना भी असंभव है, क्यों कि वेदों के मंत्र, अक्षर और मात्राएं तक गिने हुए हैं। इसके विपरीत लौकिक संस्कृत में मिलावट करना बड़ा आसान है, विशेषकर इसलिए कि मनुस्मृति आदि के श्लोक अक्षरशःगिने हुए नहीं थे। जब आजकल १९७०-७७ के युग में भी नकली व्यापारी दूध-घी, आटे-दाल, नमक-मिर्च मसालों में मिट्टी-गोबर, लीद की ८५% मिलावट कर सकते है, तो २५०० वर्ष पहले नकली पंडितों को धर्मशास्त्रों में मिलावट करने से कौन रोक सकता था ? अतः उन्होंने जी-भर मिलावट (प्रक्षेप) की क्योंकि—(i) तब शास्त्र पढ़ने-पढ़ाने का एकाधिकार (Monopoly) केवल ब्राह्मणों के हाथों में था (ii) जनता शास्त्र पढ़ लिख नहीं सकती थी। अतः स्वार्थी पंडितों ने दो कारणों से मिलावट की—

(ख) **कारण एक**—सिकन्दर आदि विदेशी आक्रमणकारियों की देखा-देखी कुछ ब्राह्मण मांस खाने लगे थे। अपनी इस कमजोरी को उचित साबित करने के लिए उन्होंने मांसाहार समर्थक श्लोक शास्त्रों में दिए। **कारण दो**—६०० ई० पू० में स्वामी महावीर के जैन पंडितों ने और लगभग ५१६ ई० पू० में महात्मा बुद्ध के बौद्ध भिक्षुओं ने नकली पंडितों की हिंसा के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और उन्हें शास्त्रार्थ की चुनौती दी। पंडितों ने अपनी गलत बात को ठीक सिद्ध करने के लिये मनुस्मृति, महाभारत आदि धर्मग्रंथों में ऐसे नकली श्लोक मिला दिये जैसे ऊपर के प्रश्नों में लिखे हैं। कोई भी पारखी विद्वान एक दृष्टि में पहचान सकता है कि ऐसे श्लोक मिलावटी हैं, क्योंकि मनुस्मृति के उसी अध्याय में स्पष्ट लिखा है—

"अनुमन्ता, विशंसिता, निहन्ता, क्रय-विक्रयी संस्कर्ता,

चोपहर्त्ता च खादकश्चेति घातका:। -मनु अ०५/श्लोक५१

अर्थात् पशु-पक्षी मारने के लिए कहने वाले, मारने, काटने, बेचने, खरीदने, पकाने, परोसने और खाने वाले सब हत्या के अपराधी हैं। ३-६-७६ को गृहराज्य मंत्री श्री ओं महता ने राज्य सभा में घोषणा की कि—"भारतीय संविधान के ४८वें अनुच्छेद के अन्तर्गत १६ राज्यों और ५ केन्द्र शासित प्रदेशों में गोहत्या पर रोक लगा दी गई है। मनुस्मृति में बताये आठों प्रकार के लोग गोहत्या के अपराधी समझे जाएंगे।" यह आज के हमारे कानून से भी सिद्ध होता है। Commonsense की बात है कि एक ही अध्याय के एक ही सांस में कई श्लोक मांसाहार के बिल्कुल विरोध में तो कुछ उसके कट्टर समर्थन में कैसे लिखे जा सकते हैं? अतः मिलावट स्पष्ट है। आज के वैज्ञानिक युग में पढ़े-लिखे लोग ऐसे मिलावटी श्लोकों से बहकाये नहीं जा सकते।

आपके हर प्रश्न का ??? जवाब हाजिर है !

प्रश्न—क्या दूध भी माँस नहीं है ?

उत्तर—नहीं, क्योंकि वह मांस का हिस्सा नहीं। आहार से सीधा दूध बनता है। माँस काटने से दर्द होता है और कोई अपना माँस खुशी से नहीं देता। दूध दूहते दर्द नहीं होता और मां अपने पुत्रों को स्नेह से दूध पिलाती है तथा पिलाये बिना तड़पती है।

प्रश्न—प्रकृति का नियम है—जीवो जीवस्य भोजनम्–जीव, जीव को खा रहा है। फल-सब्जी आटा-दाल हर चीज जीवों से बनी हैं। ऐसे हम करोड़ों जीव हर रोज खाते हैं तो एक मुर्गी-बकरा खाने में क्या बुराई है ?

उत्तर— (क) घासपात आटे दाल में सुषुप्त /Unconcious Life/ है। अतः उनमें पशु पक्षी मनुष्यों की तरह सुख-दुख, इच्छा द्वेष प्रयत्न आदि नहीं। (ख) दूध-दही आदि में विद्यमान करोड़ों जीव हमारे पेट में जाकर मरते नहीं, प्रत्युत स्वयं भी जीते रहते हैं और अपनी जीवनी शक्ति से हमारे रक्त, मांस, मज्जा आदि में भी जीवन का संचार करते हैं। यदि मर जाएं तो भला हमें जीवन और शक्ति कैसे दे पाए ? अतः 'जीवो जीवस्य भोजनम्' का वैज्ञानिक अर्थ यह हैं कि—एक प्रकार के जीवन से दूसरे तीसरे प्रकार का जीवन बनता-पनपता हैं, अर्थात 'अन्नं वै प्राणः' आहार ही जीवन है।

प्रश्न--यदि सब मांस खाना छोड़ दें तो मुर्गियों भेड़-वकरियों की आबादी बेहद बढ़ जाये ?

उत्तर—घबराइये नहीं। आप मांस खाना छोड़ दे। जिस प्रकृति ने मुर्गियाँ और भेड़-बकरियां पैदा की, उसी प्रकृति ने उनकी आबादी को सीमा में रखने के लिए उन्हें खाने वाले शेर, चीते, बाघ

भेड़िये, कुत्ते, चील, कौए भी पैदा कर दिये हैं। वे स्वयं ही मुर्गियों आदि को खा-पीकर हिसाब बराबर कर देते हैं, बशर्ते कि शिकारी शेर-चीतों को मार-मार उनके वंश तक को नष्ट न कर दे। इसी लिए भारत सरकार को 'जंगली जानवर और पक्षी संरक्षण का कानून १६१२ और १६५२ में वन्य ज़ीवन बोर्ड बनाना पड़ा। यह मनुष्य की भूल है कि वह शेर चीतों को अंधाधुंध मार रहा है। जब शेर न रहे तो हरिणों,बकरियों, मुर्गियों को कौन खाएगा।? उन्हें कोई न खाए तो उनकी संख्या बढ़ेगी ही। अतः पशुओं की आबादी का संतुलन बिगाड़ने वाला भी मनुष्य ही है। यदि हम पूरी तरह पशु-हिंसा छोड़ दें तो प्रकृति अपने आप पशु-पक्षियों की आबादी ठीक रख लेगी। हमें शेर-चीते के बदले बकरे-मुर्गियाँ खाने की तकलीफ नहीं करनी पड़गी। यदि आप आबादी का संतुलन बनाये रखने के लिए ही मांस खाते हैं, तो मनुष्यों का मांस क्यों नहीं खाते, क्योंकि आजकल हद से ज्यादह आबादी तो मनुष्यों की बढ़ रही है और पैरिस में Ecole pratique des hautes etudes के प्रोफेसर M. Rodinson का दावा है कि "शरीर-विज्ञान की दृष्टि से मनुष्य के मांस में ऐसी कोई भी खराबी दिखाई नहीं देती जिसके कारण इसे खाने योग्य न समझा जा सके। यह बात दूसरी है कि मनुष्य जाति की रक्षा और सामाजिक अनुशासन को ध्यान में रख कर किसी सयाने ने आज तक किसी होटल में मांस की प्लेटें परोसने की खुलमखुल्ला सलाह नहीं दी। फिर भी मनुष्य के माँस पर यह पाबंदी न तो विश्व-व्यापी है और न हा सामाजिक।"
कुछ जंगली जातियां अब भी मनुष्य का मांस खाती हैं। खाने में मनुष्य का माँस इतना स्वादिष्ठ होता है कि श्री लिंडसे ने 'स्काटलैंड के इतिहास १८१४' में लिखा है---"स्काटलैंड के पूर्वी तट पर एक परिवार के लोग बच्चे चुरा-चुरा कर उनका माँस खाया करते थे। जब उन्हें पकड़कर लोग मारने लगे तो उस

परिवार की एक लड़की ने कहा—"मुझे मारते क्यों हो ? मैंने क्या अपराध किया है ? मैं आप को विश्वास दिलाती हूँ कि यदि आप लोग एक बार भी स्त्री—पुरुषों का मांस चख लें तो आपको ऐसा स्वाद लग जाये कि फिर कभी आप उसे छोड़ें ही नहीं।" मनुष्य बढ़िया-बढ़िया वस्तुएं खाता है, अतः मनुष्य के मांस में तत्व भी सबसे अधिक पायें जाते हैं।

प्रश्न—यदि हम बेहोशी की दवा देकर पशु-पक्षियों को मारें तब तो उन्हें दर्द न होगा। अतः हमें हिंसा का पाप न लगेगा।

उत्तर—यदि बेहोशी की दवा देकर मनुष्य को मारना अपराध है तो इस प्रकार पशु-पक्षी को मारना भी पाप है। "जब बड़े-२ वैज्ञानिक कीड़े-मकौड़ो को भी नहीं जन्म दे सकते तो उन्हें मारने का हमें क्या अधिकार है ?" (मदन मोहन मालवीय)

प्रश्न जो कबूतर बिजली के पंखे से अपने आप मर जाये उसे खाने में तो कोई दोष नहीं ?

उत्तर—इससे हिंसा का पाप लगे न लगे पर मन पर माँस का तामसिक असर तो अवश्य होगा। हमारी आदत अवश्य बिगड़ेगी और हमें माँस खाने की आदत पड़ जाएगी जिससे मजबूर होकर हम जीवित कबूतर भी मार कर खाने लगगे।

मनोवैज्ञानिकों का दावा है कि सिनेमा में हत्या के दृश्य देखने से दर्शकों में हत्याएं करने की भावना भड़कती है। अत. सरकार सिनेमा में हत्या के दृश्यों पर रोक लगाने का विचार कर रही है। जब हत्या का दृश्य देखने से ही हत्या करने के ख्याल आ सकते है तो माँस खाने से तो युद्ध में लाखों की हत्या करने का विचार भी पैदा होना स्वाभाविक हैं। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार हिंसा की तमोवृत्ति

के कारण ही युद्ध और महायुद्ध भड़कते है। १८-११-७६ को भारत के भूतपूर्व रक्षा-सचिव श्री सरीन के अनुसार—"पिछले ३० वर्षों में विश्व मे ११६ युद्ध लड़े गये जिनकी कुल अवधि को जोड़ें तो ३५० वर्षों का एक महायुद्ध बन जाये। दूसरे शब्दों में इस अवधि में हर रोज दुनियां के १२ क्षेत्रों में कोई न कोई युद्ध चलता ही रहा। इन पर ६० खरब डालर खर्च हुए जो १९७५ में सारी दुनियाँ की कुल राष्ट्रीय आय के बराबर है।

प्रश्न—ईश्वर भी तो करोड़ों प्राणियों को नित्य मारता है। क्या उसे पाप नहीं लगता?

उत्तर—नहीं, क्योंकि ईश्वर पाप-पुण्य से ऊपर है। न उसे करोड़ों जीव पैदा करने का पुण्य मिलताहै और न ही उन्हें मारने का पाप लगता है।

प्रश्न—मांसाहार आज की सभ्यता और शिष्टाचार की कसौटी बन गया है। निम्न वर्ग (Lower class) तथा उच्च वर्ग (upper class) की दावतों में प्रायः माँस से बनी चीजें परोसी जाती हैं। यदि हम दावतों में जायें और मांस खाने से इन्कार करें तो लोग खिल्ली उड़ाते हैं। यदि मांसाहार के भय से दावतों में जाने से परहेज करें तो मित्र मंडली से कट कर रह जायें।

उत्तर—दुनियां के सब जीवों में मनुष्य की श्रेष्ठता मांस खाने के कारण नहीं बल्कि मानवीय (Humanitarian) गुणों के कारण है और मानवता का मतलब निर्दोष जीवों को मारना नहीं, बल्कि उन की रक्षा करना है। प्राणी-मात्र से प्रेम और दया ही मनुष्य की निशानी है क्योंकि दया करना केवल मनुष्य ही जानता है, पशु-पक्षी नहीं। अतः मनुष्य के लिए मनुष्यता पहले है, शिष्टाचार बाद में।

शिष्टाचार की अधिक परवाह करने लगें तब तो आजकल सिगरेट, और शराब भी दावतों के रिवाज बन चुके हैं। सिगरेट-प्रेमी मित्रों के आग्रह पर करोड़ों लोग सिगरेट पीने लग गये हैं। क्या आप मित्रों की परवाह करके सिगरेट, और शराब भी पीना चाहेंगे ? असल में नीति तो यह होनी चाहिए कि—'सुनें सब की, करें अपने मन की।' मनुष्य में इतना आत्मबल होना चाहिये कि वह 'मथुरा गये मथुरा दास, जमना गये तो जमनादास' न बनकर अपने आदर्श पर दृढ़ रहे। जब आपके सभी मित्र जान जाएंगे कि आप शुद्ध शाकाहारी हैं तो निश्चय ही प्रत्येक दावत में आप और आप जैसे अन्य शाकाहारियों के लिए शाकाहारी भोजन की भी व्यवस्था किया करेंगे। आजकल भी प्रायः दावतों में, हवाई जहाजों पर और विवाह शादियों में दोनों प्रकार के भोजन परोसे जाते हैं।

प्रश्न—कहते हैं कि मुस्लिम, सिख, ईसाई धर्मों में मांस खाने की छूट है। क्या उन सब को पाप नहीं लगता है ? केवल हिन्दुओं को ही लगता ?

उत्तर—किसी धर्मशास्त्र में मांस खाने की खुली छूट नहीं दी गई है।इसीलिये सिखों में नामधारी आदि मुसलमानों में सूफी आदि तथा ईसाईयों में प्रोटेस्टैंटों का एक बड़ा वर्ग मांस खाने के पक्ष में नहीं है।

इन तीनों धर्मों के धर्मशास्त्रों में मांस न खाने की प्रेरणा देने वाले अनेक स्थल हैं; जिनका मतलब है--"सब जीवों पर दया करो। अपने स्वार्थ के लिए किसी जीव को मत मारो, मत सताओं। जैसे तुम्हें अपनी जान प्यारी है वैसे ही दूसरे जीवों को भी प्यारी है अतः जैसा व्यवहार तुम अपने साथ चाहते हो वैसा ही दूसरों के साथ भी करो।" इस प्रकार यदि सब अपने-अपने धर्मशास्त्र पर चलें तो

किसी भी धर्म का कोई भी अनुयायी मांस न खायें किन्तु प्रत्येक धम में धर्मशास्त्र के साथ-साथ कुछ परम्परायें भी चल पड़ी हैं जैसे बौद्ध लोग अहिंसावादी होकर भी सांप-चूहे- कीड़े तक खा जाते है। परन्तु महात्मा बुद्ध ने ऐसा कहीं भी नहीं लिखा।

प्रश्न—मांस के भारीपन और अन्य दोषों को हलका करने के लिए यदि उस का शोरबा बनाकर पिया जाये तो कैसा रहे ?

उत्तर—आपने तो वही बात की—

'भूखा जाट मुड़-मुड़ प्याज़ चबावे
उल्टा, प्याज़ उसकी भूख बढ़ावे।'

आप मोटे मांस के दोषों को हल्का करने के लिए उसका पतला शोरबा बनाना चाहते हैं, पर शायद आप विज्ञान का यह नियम नहीं जानते कि—'स्थूल पदार्थ ज्यों ज्यों सूक्ष्म बनता जाता है त्यों-त्यों उसकी शक्ति (Potency) बढ़ती जाती है।'' इसी सिद्धान्त पर होम्योपथिक दवाईयां बनती हैं। इसी प्रकार शोरबा बनाने से मांस के दोष हल्के नहीं होते बल्कि तेज हो जाते है। अतः आप यदि मांस के दोषों से बचना चाहते हैं तो आपको मांस से ही बचना पड़ेगा। यदि आपको बलवान बनने का ही बहुत चाव है तो—

'दुर्बल को न सताइये जा की मोटी हाय
बिना सांस की धौंकनी, लोह भस्म हो जाए'

मरे हुए बकरे की खाल से भी (धौंकनी) जो 'हाय' निकलती है उससे लुहार का लोहा तक जलकर राख हो जाता है। फिर जो

लोग खून और मांस बढ़ाने के लिए हजारों-लाखों बेकसूर बेजुबान प्राणियों को चट कर जाते हैं, उनकी क्या गति होगी ? अतः आप ताकत का यह अचूक और सुनहरी नुस्खा क्यों नहीं अपनाते—

"मज्जा मज्ज्ञा संधीयताम्। चर्मणा चर्म रोहतु। असृक ते अस्थि रोहतु। माँस मांसेन रोहतु। अथर्ववेद कांड ४। सूक्त १२। मंत्र ४।

अर्थात हे रोहणी वनस्पति ! तेरी चर्बी से हमारे शरीर में चर्बी पैदा हो, तेरी मज्जा से मज्जा मिले, तेरी हड्डी से हड्डी भरे और तेरे मांस से हमारा माँस बढ़े !

जब जीवन और सब शक्तियों का मूल स्रोत वनस्पति ही है तो क्यों न हम सीधे वनस्पति से ही शक्ति प्राप्त करें ?

—०—

मुद्रक-अनिल एन्टरप्राईज़ज, नई दिल्ली-११००१५